RNI No. : UPHIN-2009/29369

डाक पंजीकरण : KANPUR HO/002/2022-24
प्रधान डाकघर कानपुर-डाक प्रेषण दिनांक 29/30

वार्षिक सदस्यता शुल्क 100/-

द्रविड़ भारत

www.dbindia.org.in

सामाजिक परिवर्तन का मासिक पत्र

दिसम्बर-2023 | वर्ष - 15 | अंक : 11 | मूल्य : 5/-

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

सम्पादकीय

RNI No. : UPHIN-2009/29369

संपादक : उमेश्वरी देवी, मो.: 9005204074
संरक्षक मण्डल : मा. रामदीन अहिरवार (महोबा), मा. राम अवतार चौधरी (सहा.अभि. जलकल विभाग), मा. छविलाल वर्मा (चरखारी), मा. हरिनाथ राम (दिल्ली), मनीष कुमार मो. 9415053621
राज्य ब्यूरो प्रमुख उत्तर प्रदेश :
सुनील कुमार, ढेलवा, गाजीपुर (उ.प्र.), मो.: 9935363730, 9170836363
योगेन्द्र कुमार (ब्यूरो चीफ चित्रकूट मण्डल) मो.: 8299162841
हमीरपुर ब्यूरो प्रमुख - रघुवर प्रसाद, मो.: 9793739030
क्षेत्रीय सम्पादकीय कार्यालय :
40/69, डी-5, श्यामलाल का हाता, परेड, कानपुर (उ.प्र.), मो. : 8756157631
ब्यूरो प्रमुख लखनऊ मण्डल :
राजकुमार, उन्नाव
मो.: 9889273743, 9392660070
हरियाणा राज्य :
डा. रमेश रंगा, ग्राम-सराय, औरंगाबाद, पो.-बहादुरगढ़,जिला-झज्जर (हरियाणा),09416347052
कानूनी सलाहकार : एड. रामप्रकाश अहिरवार, एड. यू.के. यादव, मोती लाल वर्मा, एड. विजय बहादुर सिंह राजपूत, एड. रमाकान्त धुरिया, रामऔतार वर्मा, एड. सुशील कुमार, कानपुर
मध्य प्रदेश राज्य : पुष्पेन्द्र कुमार
कार्यालय : ग्रा. व पो.-रामटौरिया, जिला-छतरपुर
छत्तीसगढ़ राज्य : ब्यूरो प्रमुख
रमा गजभिये, मो.: 7828273934
दिल्ली प्रदेश : C/o अनिल कुमार कनौजिया C-260, हर्ष विहार, हरिनगर एक्सटेंशन पार्ट-III, बदरपुर, नई दिल्ली-44, मो. : 09540552317
राजस्थान राज्य : रघुनाथ बौद्ध, श्याम रघु फुट वियर, दुकान नं.-1, गणेश मार्केट, पुलिस चौकी के सामने, अलवर, जिला-अलवर-301001, मो. : 09887512360, 0144-3201516
बाबूलाल बौद्ध, अलवर, मो.-08058198233
संपादकीय/विज्ञापन प्रसार/पंजीकृत कार्यालय :
ग्रा व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला-महोबा (उ.प्र.)
मो. : 9005204074, 8756157631
E-mail : dravinbharat1@gmail.com
प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वामी
उमेश्वरी देवी द्वारा ग्रा. व पो.-रिवई (सुनैचा), जिला महोबा से प्रकाशित व श्रेय ऑफसेट प्रा. लि., 109/406, नेहरू नगर, कानपुर, 84/1, बी, फजलगंज, कानपुर से मुद्रित

प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशित लेख, सामग्री, में संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। इसमें किसी भी प्रकार का दावा या विचार मान्य नहीं होगा। लेख के विवादित होने पर लेखक ही उत्तरदायी होगा समस्त विवादों का निपटारा महोबा न्यायालय में होगा पत्रिका का संपादन एवं संचालन पूर्णतयः अवैतनिक एवं अव्यवसायिक है।

मिशन को बढ़ाने के लिए सहयोग करें -
भारतीय स्टेट बैंक, शाखा-पी.पी.एन. मार्केट, कानपुर
खाता सं.-33496621020 • IFSC CODE-SBIN0001784

रामराज्य की कल्पना अशोक के धम्म राज्य से

संस्कृत रामायण कर्ताओं को श्रीलंका के बारे में बिल्कुल जानकारी नहीं थी। इतना ही नहीं तो लंका से जाकर वापस आया कोई आदमी उनको नहीं मिला इन लेखकों को केवल इतना ही दिखाना था कि आठ सौ मिल समुद्र पार कर वैदिक लोग बौद्धों के पहले ही लंका गये थे। इस एक ही उद्देश से प्रेरित इन ब्राह्मणों की सोच ऐसी थी, जो वनस्पति उत्तर भारत में मिलती है, वही लंका में भी होगी। जो भाषा उत्तर भारत में बोली जाती है, वही लंका में बोली जाती होगी। इसके चलते दो हजार मिल के अंदर ही रामायण घटीत हुआ। यह बतानेवाले इन लेखको के रामायण के पात्रो को कभी भाषा की अडचन नहीं आयी। बंदर, गृध, रीस, मानव, यक्ष, और राक्षसनी कि भाषा संस्कृत। जो की वह किसी की भी मातृभाषा नहीं थी फिर भी सभी की है ऐसा आभास निर्माण किया।

बुद्ध के धम्म से ब्राह्मण धर्म पुराना है इसका विस्तार समुद्र पार द्वीपों पर हुआ था ऐसी धोखेबाजी करके स्थानिय जनतापर प्रभाव डालने के लिए झूठा रामायण रचा गया। अशोक ने लंका में धम्म प्रचारक भेजने से पहले वैदिकों ने वहाँ लष्करी विजय प्राप्त किया था। ऐसी डींगे हाकने के लिए यह संस्कृत रामायण लिखा। अशोक के जन कल्याणकारी राजसत्ता की प्रशंसा सर्वत्र हो रही थी। अशोक अपनी प्रजा को संतान मानता था। संतान समझकर प्रजा की देखभाल करने से यह काफी लोकप्रिय हुआ था। (केवल ब्राह्मणों को ही अशोक नहीं चाहिए था।) बुद्ध के धम्म का पालन करके लोकप्रिय हुए अशोक से ज्यादा वैदिकों के धर्म का पालन करने वाला राम भी इतना लोकप्रिय हुआ था कि, राम ने जलसमाधी लेते ही उसके अयोध्या के सभी प्रजा ने नदी में जान दी, ऐसी घटना घटी ऐसा लिखने से अशोक के राजसत्ता के लोकप्रियता को पर्याय के तौर ब्राह्मणों ने 'रामराज्य' का चित्र रेखांकित किया। मेरे इस प्रतिपादन को सपोट डॉ. रोमीला थापर ने लिखा ग्रंथ का जो अनुवाद डॉ. शरावती शिरगांवकर ने किया है। उनके आगे दिये गये विधान से पता चलता है – 'ऐसा वैभव एवं पवित्रता का काल मतलब आदर्श राज्य यह कल्पना इस समय (अशोक) के लोगों के मन में हमेशा थी। इसमें कोई दोराय नहीं। आगे के समय में रामराजा के कल्पना में वह संपूर्णता से स्पष्ट हुई। (मूल अंग्रेजी ग्रंथ का नाम Ashok And The Decline of Moury's)

मौर्य राजकर्ताओं की हत्या करके ब्राह्मणों ने साम्राज्य हथिया लिया, तब मौर्या को नालायक ठहराने की कोशिश ब्राह्मणों ने की। यह नालायकपन नैतिकता के बारे में सिद्ध करना ब्राह्मणों को संभव नहीं था। इसलिए मौर्या को पाखंडी करार देकर उनकी बदनामी की मुहिम ब्राह्मणों ने निकाली। वेद और यज्ञ को महत्व न देने वाला, तो पाखंडी ऐसी व्याख्या ब्राह्मणों ने की।

यज्ञ में इतना सामर्थ्य था की, बांझ महिला को भी यज्ञ के प्रभाव से बच्चा पैदा होता है। यक लोगों को बताने के लिए संस्कृत रामायण में दशरथ के पुत्र कामेष्ठी यज्ञ का झूठा वर्णन किया गया। इसी प्रकार के यज्ञ महानता की झूठे वर्णन लिखकर महाभारत और अन्य पुराण उस में जोडा गया। असंभव बातें संभव करने वाले दैवी शक्ति का यज्ञ अशोक ने नकारे वैसे ही मौर्य वंश में कोई भी राजा ने इसे स्वीकारा नहीं था। ब्राह्मण लोगों के अलावा कोई भी मूलनिवासी वेदों को एवं यज्ञ को भीख भी नहीं देता था। अंधविश्वासी लोग, ब्राह्मणों ने शिफारीश करने के बाद यज्ञ करा लेते थे। पर वे वैदिक धर्म का स्वीकार किया इसलिए नहीं तो भला हो, अपने उपर का संकट टले, इच्छा पूर्ती होने इन अपदायों से। अशोक ने बली देने पर प्रतिबंध लगाने वाला कानून बनाया था। इसका सबसे ज्यादा प्रभाव यज्ञ में दिये जाने वाले पशुबली देने वालें ब्राह्मणों को पड़ा वैसे ही वामाचार करने वाले संप्रदाय पर पड़ा पर वामाचारी या तांत्रिक संप्रदाय ने अशोक को पाखंडी नहीं ठहराया। ब्राह्मणों ने मात्र अश्वासूर कहकर गालियाँ दी। (महिषासूर, नरकासूर इस चाल पर अशोक का अश्वासूर) असूर यानी राक्षस ऐसा भी अर्थ मानकर अशोक को अश्वासूर कहा जो पुराणकारों ने गाली की तरह थी। रावण को तो सीधा-सीधा 'राक्षस' गाली दी और बुद्ध को 'चोर' गाली दी। बुद्ध को चोर कौन कहता है तो स्वंय राम।

पुराणों के कल्पना के अनुसार राम सातवा अवतार, यह राम त्रेता नाम के ब्राह्मण कल्पना के युग में हुआ। बुद्ध को पुराण ने नौवा अवतार माना। वह ब्राह्मण कल्पना के कली युग का, त्रेता युग का और कली युग के सारे साल मायनस किये तो त्रेता और कली के बीच का अंतर द्वापर युग के आठ लाख चौसष्ट हजार वर्ष बाकी रहते हैं। राम बुद्ध के पहले कम से कम आठ लाख चौसष्ट हजार वर्ष पूर्व हुआ ऐसे कहा जाये तो उसे फिर बुद्ध का अर्थ चोर यह कैसे पता चला?

यहाँ पर कोई कहेगा राम देव का अवतार था, इसलिए कलीयुग में उसके बाद दस, बारह लाख वर्षों से बुद्ध जन्म लेगें यह बात राम को पता थी, तो फिर आश्रम में सीता नहीं! यह देखकर राम हैरान क्यों हुआ? उसे रावण भगा ले गया और लंका में लाकर रख दिया यह बात उसके गुजरते दिनों के जीवन की अत्यंत व्याकूल करने वाली घटना उसे क्यों पता नहीं चली? इस प्रश्न के उत्तर यही है की, रामायण बुद्ध के बाद लिखा गया। बुद्ध के बाद ईसा पूर्व 187 तक जैन, आजीवक और बौद्ध नृपती की राजसत्ता थी और ब्राह्मणों की एक भी राजसत्ता नहीं थी। तब बुद्ध को गालियाँ देने का ढ़ाँढ़स ब्राह्मणों को क्यों नहीं हुआ?

ईसा पूर्व 187 में बौद्ध नृपती बृहदरथ मौर्य की पुष्यमित्र और अग्रिमित्र शुंग इन पिता पुत्रों ने हत्या करके साम्राज्य पर कब्जा करते ही ब्राह्मणों ने बुद्ध को गाली गलौच देने का ढ़ाँढस हुआ। इसलिए शुंग काल में रचे इस रामायण का राम कहता है ''यथैव चोर तथैव बुद्ध'' (जैसा चोर वैसे बुद्ध) कहने का तात्पर्य यह है कि, बुद्ध धम्म और अशोक का धम्म राज्य इनका महत्व नष्ट करने के लिए इस संस्कृत रामायण की रचना की गयी। ऐसी रचना करने के लिए अनुकूल वातावरण ईसा पूर्व दूसरी सदी और पहली का समय ब्राह्मण राजसत्ता थी बाद में ईसा पूर्व चौथी सदी के बाद गुप्त वंश राजसत्ता में रामायण अधिक ब्राह्मण समर्थक की बना।

साभार – प्रदूषित रामायण
पृष्ठ सं. 61 से 63
श्रीकांत शेटये

हिन्दू होने का नारा–दलितों की अलग पहचान मिटाने की साजिश

हिन्दू आतंकवादी जो न तो इस देश से प्यार करते हैं न इस देश की जनता से उनका एक मात्र ध्येय आतंक के सहारे अपना राज्य कायम करना है। इन आतंकवादियों से कैसे छुटकारा पाया जाय, यह आज का अहम सवाल हम सबके सामने हैं।

हिन्दू नाजी देश को जिस तबाही में डालने की साजिश में संलग्न हैं उस तबाही से कैसे बचा जाय उसका निदान ढूढ़ना आज की महत्वपूर्ण आवश्यकता है।

यह ऐतिहासिक सच्चाई है कि दलित और अल्पसंख्यक भारत की एक ही रक्त वंश की आदि सन्तानें हैं किन्तु आतंकवादी हिन्दू नाजियों ने किस प्रकार अल्पसंख्यकों के विरूद्ध दलितों को बारूद के तौर पर इस्तेमाल किया, यह विचित्र घटना है। हिन्दू नाजियों को, दलितों को अल्पसंख्यकों के विरूद्ध गुमराह कर आग में झोंकने की महारत हासिल है। जहां जहां हिन्दुओं ने मुसलमान, ईसाई और सिखों के विरूद्ध खूनी मोर्चा खोला उन्होंने इस दलित वर्ग को इस्तेमाल किया और दलितों ने गुमराह होकर अपने ही रक्त वंश के अल्पसंख्यक भाईयों का कत्लेआम किया। (हिन्दू उत्पीड़न के कारण दलित ही धर्म बदल कर मुसलमान, ईसाई और सिख बने हैं।) हर सम्प्रदायिक दंगे में हिन्दू नाजी, दलितों को बलि का बकरा बनाते हैं।

डा० आम्बेडकर के कथनानुसार और अब तक समस्त नृवंश विज्ञान की खोजों के तथ्यों से सिद्ध हो चुका है कि दलित हिन्दू नहीं है। यह सर्वमान्य है, कि दलितों पर बाबा साहब से अधिक सही बात किसी अन्य व्यक्ति की नहीं हो सकती है। हिन्दू आर्य वंशज हैं विदेशी है, दलित अनार्य द्रविड़ों की सन्तानें हैं और भारत के मूल निवासी हैं। यह ऐतिहासिक सच है। यही कारण है कि हिन्दू दलितों से घृणा करते हैं, उनका कत्लेआम करते हैं उनकी जायदाद लूटते, बरबाद करते हैं और आरक्षण का विरोध करते हैं। दलित भी इन हिन्दुओं से नफरत करते हैं जो ब्राह्मणवादी हैं। यह सच है कि डॉ० अम्बेडकर पूरे जीवन भर इन हिन्दू नाजियों से लड़ते रहे।

यह सच्चाई है कि दलित और मुसलमान दोनों खून के रिश्ते के सगे भाई हैं और दोनों अपने कामन दुश्मन हिन्दू के आतंक से मुसीबते झेल रहे हैं। दलित और मुसलमान एक रक्त वंश के हैं तो ऐसे कौन से कारण है जो इन दोनों भाइयों को मिलने नहीं देते। हम हर हिन्दू मुस्लिम लड़ाई में देखते हैं कि दलित मुसलमानों के विरोध में हिन्दुओं के दुमछल्ले बन जाते हैं। गुजरात में सन 2002 में जो हिन्दुओं ने मुसलमानों पर कहर ढाया उनका कत्लेआम किया और उनकी बरबादी की उसमें दलितों ने मुसलमानों के विरोध में हिन्दुओं का साथ दिया जबकि कुछ ही वर्ष पहले वे इसी गुजरात में दलितों के आरक्षण का हिन्दुओं द्वारा विरोध देख चुके थे। गुजरात के भूकम्प की तबाही के समय जिस प्रकार दलितों के साथ केम्पों में न रहना, उनके लिए हिन्दुओं से अलग लंगर लगवाना और सारी राहत राशि हिन्दुओं द्वारा हड़प लेना जैसी दलित विरोधी हिन्दू नफरत के भुक्तभोगी वहां के दलित यह नजारा भूले भी नहीं थे फिर क्या कारण है कि दलित मुसलमानों के विरूद्ध हिन्दुओं के साथ होकर लड़े और दलित मुसलमानों के खिलाफ हिन्दुओं के हथियार बने।

ऐसा लगता है कि इस प्रकार के सोच की त्रासदी का कारण मुसलमान और दलित दोनों ही हैं। इन दोनों को भली भांति मालूम है कि हिन्दू उनका समान दुश्मन है किन्तु वे यह जानते हुए भी कि दलित मुस्लिम एक रक्त वंश के हैं वे दोनों खुलकर इसका न ऐलान करते हैं न इसे आचरण में उतारते हैं। इसके लिए दलित कम मुसलमान अधिक दोषी है। मुसलमानों में 95 प्रतिशत का खून और दलितों का खून एक है किन्तु जिस प्रकार हिन्दुओं को 3 प्रतिशत ब्राह्मण गुमराह किए रहता है उसी प्रकार 5 प्रतिशत अगड़ा मुसलमान जो सवर्ण हिन्दुओं से धर्मान्तरण का स्वार्थ एवं लालचवश मुसलमान बना है वह सभी मुसलमानों का नेतृत्व करता है और 95 प्रतिशत मुसलमानों को गुमराह करता है। यही 5 प्रतिशत अशरफ मुसलमान है जो दलित मुसलमानों की एकता में सबसे बड़ा बाधक है। यह इस्लाम के लिए कुरबान होने का प्रचार करता है। दलित मुस्लिम रक्त भाई बताने और दोनों को एक सामाजिक इकाई बनाने का कभी कोई मुसलमान प्रचार नहीं करता। मुसलमानों पर धर्म का अफीम से भी ज्यादा नशा है। वह आदमी को धर्म का कीड़ा मानकर चल रहा है जबकि धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं है। धर्म मनुष्य ने पैदा किया है धर्म ने मनुष्य को नहीं।

दलित तो गुलामी में रहते रहते विवेकहीन हो चुका है उसने अपने भेजे पर ताला लगा रखा है वह हजारों वर्ष से हिन्दू का गुलाम है। बाबा साहब मरते दम तक दलितों को गुलामी का अहसास कराते रहे। हजारों दलित चिंतक, विचारक इसको हिन्दू गुलामी से मुक्त होकर स्वतन्त्र चिन्तन हेतु प्रेरित कर रहे हैं और बतला रहे हैं कि मित्र–शत्रु, अपना–पराया पहचानने का प्रयत्न करो, किन्तु यह दलित बज्र चिकना है कि गुलामी में ही ऐश कर रहा है, गुलामी की मौज ले रहा है। यह इस बात को नहीं समझ रहा है कि हिन्दू हमारा दुश्मन नम्बर एक है जिसने हमें हजारों वर्ष से अपना गुलाम बना रखा है। हिन्दू कदम कदम पर दलितों के आरक्षण का विरोध करता है छुआछूत का व्यवहार उसने अभी तक छोड़ा नहीं है। हिन्दू उसको मन्दिर में घुस जाने पर पीटता है, घोड़े पर बारात चढ़ा दे तो हिन्दू दूल्हा समेत सारे दलित बारातियों की जूतों से पिटाई करते हैं। वे किसी दलित को छूना तक पसन्द नहीं करता है फिर उसी हिन्दू के हुक्म पर मुसलमानों पर हमला करना कहां की समझदारी है।

जहां दलितों ने मुसलमानों के विरोध में हिन्दुओं का साथ दिया यह वही गुजरात है जहां कुछ वर्ष पहले हिन्दुओं ने आरक्षण का विरोध करते समय दलितों के हजारों घर जला डाले थे और सैकड़ों दलितों को मार डाला गया था। दलित तो वह कौम है जो पिटकर भी होश में नहीं आती और पिटाई को भी भूल जाती है। देखने में आया कि जब गौ भक्तों ने भारत के हर दलित को पाक की गई ईटो को उठाकर अयोध्या ले जाने के लिए राम सेबक के रूप में लगाया और एक–एक दलित राम मन्दिर हेतु अयोध्या ईंटे लेकर पहुँचा तब वह भूल गया कि यह उसी राम का मन्दिर है जिसने शम्बूक दलित का तलवार से सिर काट डाला था। बाबरी मस्जिद को गिराने के लिए एक शूद्र ने ही पहला हथौड़ा बजाया ताकि वहां राम का मन्दिर बन सके तब वह भूल गया कि राम का वही मन्दिर है जहां मन्दिर के परकोटे में घुसने पर एक दलित की हत्या कर दी गई है। बाबरी के गुम्बद को गिराकर जब उस दलित ने जय श्रीराम का नारा लगाया तो वह भूल गया कि इसी राम मन्दिर का नारा लगाने वाले अछूत बंगारू लक्ष्मण को काम लेने के बाद मन्दिर के पोषकों ने मक्खी की तरह अपमानित करके निकाल फेंका। वह तब यह भी भूल गया कि मन्दिर के लिए जान जोखिम में डालने वाले हर दलित का वही हस्र होना है जो बंगारू लक्ष्मण दलित का हुआ। हिन्दुओं का साथ देने वाले और मन्दिर के कारण अपने जमीर को गिरबी रखने वाले दलित का वही हाल होना है जो रामविलास पासवान का हुआ। मन्दिर वालों की सरकार में सेवा करने वाले आज ठोकर खाकर पासवान दलित अलग थलग पड़े कराह रहे हैं और गलती उन्होंने की उसके पश्चाताप के बोझ से घायल पड़े हैं।

20वी सदी के अन्त में (1992) और 21 वीं सदी (2002) के प्रारम्भ में बाबरी मस्जिद शहीद होने और गुजरात के मुसलमानों के कत्लेआम की दो घटनाएं हुई। इन दोनों घटनाओं में हिन्दुओ ने दलित को हथियार की भांति इस्तेमाल किया। सन 1981 से 1985 के दौरान हिन्दुओं ने इसी गुजरात प्रदेश में आरक्षण विरोधी जंग में दलितों की तबाही की। इस आरक्षण विरोधी जंग में हिन्दुओं ने गुजरात प्रान्त में 120 दलितों की हत्याएं कर दी थी। इस घटना को दलित 1992 में भी भूल गया और 2002 में भी भूल गया। ऐसी है दलितों की हालत।

जब हम मुसलमानों की चर्चा करते हैं तो देखते हैं कि दलितों की भांति मुसलमान भी हिन्दू आतंकवाद के भुक्तभोगी हैं। मुसलमान उस कुरान की अहम शिक्षा को भी भूल बैठा जिसमें लिखा है कि तू अपने से कमजोरों की रक्षा कर। भारत में दलित कमजोर है पर जब गरीब कमजोर दलित पर हमला होता है तो कोई मुसलमान उसकी मदद को नहीं आता। उसने दलितों का साथ कभी किसी दलित विरोधी हिन्दू हमले में नहीं किया। जबकि मुसलमान भली भाँति जानता है कि दलितों का शत्रु हिन्दू उसी प्रकार है जिस प्रकार मुसलमानों का। कहीं कहीं तो ऐसा देखा गया है कि मुसलमानों का प्रबुद्ध वर्ग दलितों के बजाय सवर्ण हिन्दुओं के साथ रहता है। मुसलमानों के जब कोई आयोजन होता है तो वहां देखने में आता है कि वे सवर्ण हिन्दुओं को ही अधिक तर्जी देते हैं और इनके आयोजनों में दलितों की कोई सिरकत नहीं होती है। मुसलमान कवि लेखन में रामकृष्ण, राम प्रसार बिस्मिल, चन्द्रशेखर, झांसी की रानी, राणा प्रताप की प्रशस्ति गाते हैं और अपनी हीन भावना का प्रदर्शन करते हैं। मुसलमान न तो आम्बेडकर जयन्तियों में और न दलितों के सामाजिक आयोजनों में सम्मिलित होते हैं और न अपने आयोजनों में बुलाते हैं। मुसलमान नेता वक्ता राष्ट्रीय पर्वों 15 अगस्त, 26 जनवरी पर बोलते हैं तो गांधी, नेहरू और कभी–कभी हेडगेवार तक की प्रशस्तिगान करते हैं। वे वहां सर सैय्यद अहमद खां, रफी अहमद, किदवई, मौहम्मद अली जिन्ना और असफाक उल्ला खां का नाम तक नहीं लेते हैं। यह उनकी हीन भावना का प्रतीक है। दलितों से मेल जोल रखने में वे हिन्दुओं की ही भांति दूरी रखते हैं। जब मुसलमानों के सोच का यह आलम है तो वे स्वयं अपनी अस्मिता अस्तित्व कैसे स्थापित कर सकते हैं। हिन्दु तो मुसलमान और दलितों का कॉमन दुश्मन है क्योंकि हिन्दू दोनों पर हमला करता है। इसी के मद्दे नजर कुछ दलित मुसलिम बुद्धिजीवी दलित मुसिलम एकता की बात करते हैं। वे दलित मुस्लिम फोरम, संगठन भी बनाते हैं पर ऐसे संगठनों में मुसलमान रुचि नहीं लेता है ऐसी स्थिति में कोई सशक्त हिन्दू विरोध खड़ा नहीं हो पाता है। इस सबका कारण यह है कि मुसलमान अपनी उत्पत्ति की असली पहचान खो चुका है। और इसीलिए उसमें हिन्दू की भांति अपना जातीय जुनून नहीं है। हिन्दू जब नारा लगाता है कि गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं तो मुसलमान कहता है कि गर्व से कहो कि इस्लाम हमारा है हिन्दू धर्म के नाम पर नहीं हिन्दू जाति के नाम पर गर्व करता है मुसलमान में इसकी कमी है। हिन्दू जाति का नारा देता है तब भारत भूमि को अपनी जातीय विरासत की धारणा का उद्घोष करता है किन्तु मुसलमान जब धर्म पर गर्व करता है तो वह मक्का मदीना की ओर देखता है भारत भूमि को हिन्दू अपनी भारत माता कहता है तब मुसलमान में जातीय भाव नदारत होता है। हिन्दू जब जाति के नाम पर संगठित होने का नारा देता है तब मुसलमान धर्म के नाम पर संगठित होने की आवाज देता है। हिन्दू की जाति का सम्बन्ध भारत भूमि से होता है, मुसलमान के धर्म का सम्बन्ध भारत भूमि से न होकर बाहर होता है। मुसलमान की सबसे बड़ी कमजोरी यही है वह इस बात को सोचने में संकोच करता है कि उसके रक्त भाई भारत के दलित हैं और भारत भूमि का असली पुत्र हिन्दुओं से कही अधिक वह स्वयं है। मुसलमान हिन्दुओं को यह जवाब देने में भी कतराता है कि हम भारत के असली बासी हैं और हिन्दू विदेशियों के मुकाबले कहीं अधिक भारतीय हैं। मुसलमानों को अपनी जातीय पहचान बनाना होगा।

बाबा साहब ने कहा था कि दलित हिन्दू नहीं हैं किन्तु दलित अपनी जातीय पहचान खोता जा रहा है। वैदिकों (हिन्दुओं) ने बहुत चालाकी से दलितों को भी उनकी जातीय पहचान से गुमराह कर दिया है और हिन्दू बना लिया है। हिन्दुओं ने 'गर्व से कहो हम हिन्दू हैं' का नारा महज दलितों को उनकी जातीय पहचान से गुमराह करने को ही लगाया हैं। यह सच है कि यदि किसी व्यक्ति या समुदाय की उससे उसकी पहचान ले ली जाय तो वह अपनी शख्शियत खो बैठता है। यही मुसलमानों के साथ हुआ है। विदेशी धर्म प्रचारकों ने सबसे पहले मुसलमानों की उनकी जातीय पहचान को मिटाया। उनकी अपनी शिनाख्त खत्म हो गई है। आज जब दुनिया के नश्ल परस्त फासीवाद लोग अपनी पहचान कायम करने में जुटे हुए हैं वे दूसरों की पहचान खत्म करना चाहते हैं। जिन लोगों की जातीय पहचान नहीं होती उन पर नश्ल परस्त

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

लोग शासक बन बैठते हैं। यही भारत के आर्य नश्ल के हिन्दू करने में जुटे हैं। वे प्रयत्न कर रहे हैं कि मुसलमान और दलित अपनी नश्ली पहचान खो दें ताकि उन्हें आसानी से गुलाम बनाकर रखा जा सके।

आज हम यदि विश्व की तरफ देखे तो अमरीका और यहूदियों की अगुआई में चल रहे नश्लवादी व पश्चिमी शासकों की ओर से दुनियां के अन्य देशों पर भूमंडलीकरण थोपा जा रहा है ताकि वे अपनी दादागीरी स्थापित कर सके। भूमंडलीकरण का इरादा कालों, चीनियों, दलितों और मुसलमानों को गुलाम बनाने का है। भारत का हिन्दू उन गोरी नश्ल के इरादों से बहुत प्रसन्न है क्योंकि बाहरी गोरों के लोगों की भांति भारत की गोरी आर्य नश्ल (प्रतिशत सवर्ण) भारत के काले दलित अल्पसंख्यकों पर सरलता से दादागीरी स्थापित कर सकेंगे। यह दलित और अल्पसंख्यकों की नश्ली पहचान समाप्त करने में सहायक होगी।

हिन्दुओं ने दलितों की नश्ली पहचान समाप्त करने के लिए गर्व से कि हम हिन्दू है का नारा दिया। शहरी दलितों के दिमाग में भरा कि तुम भी तो हिन्दू हो इसी का असर शहरी दलितों पर दिखाई दिया और उन्होंने अपने को हिन्दू समझ कर ईसाई और मुसलमानों पर हमले किए। दलित अभी अपनी नश्ली पहचान से वाकिफ नहीं हो पाया है। इसी का लाभ उठाकर उस खाली जगह को हिन्दू नाम से भरने का काम हिन्दू ने किया। हिन्दू नाम का जहर दलितों में भरते ही वह मुसलमान और ईसाईयों का गला काटने को तैयार हो जाता है। चूंकि हिन्दू की बुनियाद में दूसरों के लिए नफरत भरी है जिसका असर इन दलितों पर हो जाता है।

दलितों को हिन्दू जामा पहचाने का कार्य बहुत वर्षों से चल रहा है। यह कार्य रा० स्व० से० संघ ने प्रारम्भ किया और गांधी ने इसमें अपनी पूरी शक्ति लगा दी। यह गांधी ही था जिसने सबसे पहले 'हरिजन' नाम देकर दलितों को हिन्दू कहना शुरू किया। स्वामी विवेकानन्द का मिशन भी यही रहा। आर्या समाज और राम कृष्ण मिशन से प्रेरणा लेकर राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का निर्माण किया गया जिसका काम दलितों का हिन्दूकरण करना है। इन दलितों का हिन्दूकरण करने के लिए हिन्दू अरबों रूपया खर्च करता है। हिन्दू नाजियों का मीडिया इन्हीं हिन्दूवादियों से निर्देशन प्राप्त करता है और दिन रात दलितों को हिन्दूकरण करने वाले प्रकाशन निकालने में लगा रहता है। दलितों को हिन्दू बनाने में हिन्दुओं का बहुत बड़ा हित है। दलित हिन्दू रहेंगे तो वे वर्ण व्यवस्था के अंग रहेंगे और चौथे वर्ण में सम्मिलित रहेंगे। परिणामत वर्ण–व्यवस्था का जो कर्म विभाजन है उसे स्वीकार करते हुए वे हिन्दुओं (ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य) के सेवक बने रहेंगे। दलितों के हिन्दू रहने से हिन्दुओं को गुलाम ढूंढने जाने की जरूरत नहीं होगी और हिन्दुओं की जो ब्राह्मणवादी व्यवस्था है उसको कभी कोई चुनौती देने वाला और खतरा पैदा करने वाला नहीं रहेगा। दलितों को हिन्दू बनाने पर हिन्दू हिन्दुत्व और हिन्दू राज्य स्थापित कर सकेंगे। हिन्दू राज्य का अर्थ है प्रजातन्त्र के विरुद्ध राजतन्त्र की स्थापना। राजतन्त्र समता स्वतन्त्रता बन्धुत्व का तन्त्र नहीं है।

हिन्दू बहुत चालाक कौम है उसकी आबादी मात्र 15 प्रतिशत है। हिन्दू राज के बिना उसकी जिन्दगी मौत का प्रश्न है। उन्हें मालूम है कि वे 15 प्रतिशत होकर 85 प्रतिशत पर शासन नहीं कर सकते इसलिए उनको 85 प्रतिशत गैर हिन्दुओं को साथ लेना होगा। हिन्दू इस बात को भली भांति जानते हैं कि इतनी बड़ी आबादी को दबाकर वे अपना गुलाम बनाए नहीं रख सकते और उनको साथ रखना भी जरूरी है इसलिए इस 85 प्रतिशत की शक्ति को समाप्त करने की आवश्यकता है यह शक्ति इसी प्रकार समाप्त की जा सकती है कि जब इन्हें हिन्दू बना लिया जाए। हिन्दुओं ने दलितों की शक्ति को समाप्त करने का यह नायाब तरीका निकाला है कि दलितों की अलग पहचान समाप्त करने के पीछे उनका दौहरा मन्तव्य हल होता है। पहला तो यह है उन्हे हिन्दू घोषित किया जा सकेगा जिसमें उन्हें बिना पैसे के सेवक मिल जांयगे दूसरे दलित जो हिन्दुओं को अपना दुश्मन नम्बर एक मानता है वह हिन्दुओं से दुश्मनी मानना छोड़ देगा। दलितों को हिन्दू बनाने से हिन्दुओं का सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि वे दलितों को हिन्दू खतरे में कहकर मुसलमान के विरूद्ध भड़काने में सफल हो सकेंगे और जब मुसलमानों के विरूद्ध मोर्चा खोलेंगे तो दलित हिन्दुओं से पहले अगली पंक्ति में लड़कर मुसलमानों का कत्लेआम करेंगे। गुजरात के मुसलमान विरोधी दंगों में यह सब देखने को मिला। बाबरी मस्जिद को दलितों ने नहीं ढ़हाया।

एक दुर्भाग्यपूर्ण विचित्र स्थिति पैदा हो गई है कि पढ़ा लिखा प्रबुद्ध दलित हिन्दू बने दलितों की लाइन में पहले अग्रणी है सूरजभान, संघप्रिय गौतम, राम विलास पासवान और मायावती तक स्वार्थ में हिन्दुत्व की गुलामी में सम्मिलित हो गए हैं और जब गुजरात में दुर्भिक्ष और मुसलमान विरोधी दंगे हुए तो सब नेता चुप रहे। मायावती–कांसीराम तो आजकल विभीषण की भूमिका अदा कर रहे है। विभीषण ने राज सिंहासन के लिए पूरी राक्षस जाति का विनाश कर दिया था। नाजी हिन्दू जितने सवल होते हैं उतने ही दलित उनके गुलाम बनते है, यह सिद्धान्त ऐतिहासिक विज्ञान से प्रमाणित है। मुसलमानों और ईसाइयों पर बीच–बीच में जो हिन्दू हमला करते हैं उसमें उनका एक राज छिपा होता है कि दलितों को गुमराह कर हिन्दू होने की घुट्टी पिलाकर मुसलमान ईसाइयों से अलग रखा जाय वे इनसे न मिल सके क्योंकि यदि दलित अल्पसंख्यक एक ही रक्त वंश की सन्तान हैं का उन्हें कहीं भान हो गया तो वे एक मंच पर खड़े हो जायेंगे और हिन्दुओं को तबाह कर देंगे। हिन्दू इसी ध्येय से अल्पसख्यकों पर हमला करते हैं पर असली निशाना तो दलित हैं जो भारत में 30 प्रतिशत हैं और हिन्दू दर्शन के विध्वंशक है। हिन्दू अच्छी तरह जानते हैं कि दलित हिन्दू नहीं हैं। आज दलितों में यदि कोई कमी है तो केवल यह है कि वे अपनी पहचान खो चुके हैं। गुजरात में दलित मुसलमानों पर हमलावर हो गया इसका कारण यही था कि दलित आपसी पहचान खो चुका है। यह सच है कि दलित अपने को हिन्दू समझ बैठा है वह हिन्दू देवी देवताओं को पूजता है उनके रीति–रिवाजों पर चलता है व्रत पर्व, त्यौहार उन्हीं के साथ मनाता है। यहां तक कि उनके नाम भी हिन्दुओं जैसे ही हैं किन्तु यह सब इसलिए है क्योंकि दलित अपनी स्वयं की पहचान खो चुका है हिन्दु चाहते हैं कि दलित अपनी पहचान पर न पहुँच सकें इसीलिए उन्हें गुमराह करने के लिए हिन्दु होने का नारा लगाता रहता है। 'गर्व से कहो कि हम हिन्दू हैं' नारे से एक तीर से दोहरा शिकार करता है। एक तो वह दलितों को उनकी अपनी असली पहचान नहीं होने देता कि वे वास्तव में हिन्दु नहीं है बल्कि देश के असली वासी हैं जिन्हे इन्हीं हिन्दुओं के पूर्वजों बर्वाद किया था दूसरा वह मुसलमानों से दलितों को भिड़ाकर मुसलमानों को मारने का काम करता है ताकि दलित मुसलमान एक न होने पावे जो इस्लाम धर्म में जाने से पहले मुसलमान बने लोग भी दलितों के ही भाई थे और उन्ही के रक्त सम्बन्धी थे। जितना आज आम्बेडकरवादी दलित है वह आम्बेडकर के इस कथन को मानकर चल रहा है कि दलित हिन्दू नहीं है। वह यह भी जानते हैं कि जिस प्रकार दलित हिन्दू नहीं हैं उसी प्रकार मुसलमान दलितों के भाई है।

इस पूरे दलित–मुस्लिम प्रकरण में मुसलमान अधिक दोषी है। एक तो मुसलमान अपनी जातीय पहचान की जानकारी नहीं करते हैं जिससे वे यह जान सकें कि वे इन्हीं दलितों के रक्त सम्बन्धी भाई हैं जो हिन्दुओं के अत्याचारों के कारण उन्हें छोड़कर इस्लाम के झंडे के नीचे चले आए हैं। दलित एक बार को यह सोचता भी है किन्तु मुसलमानों की ओर से उसे ऐसी कोई प्रतिक्रिया नहीं मिलती और हतास होकर रह जाता है। मुसलमानों के धर्माचार्य, नेता, सामाजिक कार्यकर्ता धर्म की तो बात करते हैं पर जातीय पहचान की बात नहीं करते हैं। मुसलमानों की दूसरी कमी यह है कि जो दलित हिन्दू के विरूद्ध मोर्चा खोलकर लड़ रहा है उसकी मदद नहीं करते। मुसलमान अरबो खरबों की सम्पत्ति रखते हैं वे उन दलितों को दो पैसे से मदद नहीं करता जो हिन्दुओं के विरूद्ध मोर्चा खोले जान की बाजी लगाकर लड़ रहे हैं। ये मुसलमान ऐसे दलितों के साथी नहीं बनते। इनसे अधिक तो हिन्दु चतुर है यह जानकर भी कि दलित उसके रक्त वंश के सही है फिर भी वह धन खर्च करके उन्हें मुसलमानों के विरूद्ध भड़का कर खड़ा करने का प्रयास करता है। आज दलित केवल हिन्दुओं के पैसा और शराब में गुमराह हो जाता है तथा मुसलमानों के विरूद्ध लड़ने लगता है और इस प्रकार वह दलितों के हिन्दू होने की बात कहकर गुमराह करने में सफल हो जाता है। यदि मुसलमानों ने आम्बेडकरवादियों की मदद की होती तो निश्चत ही दलित हिन्दुओं के चंगुल से मुक्त हो गए होते।

मुसलमान सबसे बड़ी गलती करता है कि वह दलितों को भी हिन्दू कहता है। उसकी समझ में आज तक नहीं आया कि हिन्दुओं के लिए दलित हिन्दू नहीं बल्कि अछूत हैं ये अछूत हिन्दुओं की दृष्टि में जानवरों से भी गए बीते हैं। मुसलमानों की कमी यह है कि वे भारतीय समाज को समझना ही नहीं चाहते हैं। सच्चाई यह है कि 20 प्रतिशत अनुसूचित 10 प्रतिशत जनजाति अर्थात 30 प्रतिशत दलित और 35 प्रतिशत पिछड़ा आर्य हिन्दू नहीं हैं बल्कि अनार्य है तथा हिन्दू का शिकार है। ये 65 प्रतिशत, 15 प्रतिशत (ब्राह्मण+क्षत्री+वैश्य) आर्य हिन्दुओं का विरोधी है पर मुसलमान इन 65 प्रतिशत को हिन्दू कहता है यह उसकी भूल है और यह भूल करके वह इनको अपने से दूर कर विरोधी वैदिक हिन्दुओं को ही मजबूत बनाता है। मुसलमान इतना धर्मान्ध है कि वह इस समाजिक गणित को समझना ही नहीं चाहता है। सच्चाई यह भी है कि यह 15 प्रतिशत सवर्ण मुसलमान विरोधी दंगे कराता है और उन्हें हिन्दू मुस्लिम दंगों का रूप दे देता है। मुसलमान इससे घबरा कर हिन्दू मुस्लिम एकता की बात करने लगता है जो असंभव है यह 15 प्रतिशत कभी हिन्दू मुस्लिम एकता नहीं चाहता है। मुसलमान गुमराह हैं उसे इस सच्चाई को स्वीकार करना होगा उसका मित्र दलित ही हो सकता है, 15 प्रतिशत वाला हिन्दू नहीं। मुसलमान की इस नासमझी के कारण ही दलितों का भी अहित हो रहा है कि वे अपनी पहचान खो बैठे हैं और हिन्दुओं के दुमछल्ले बन गए हैं। ये दलित अपनी अहिन्दू होने की पहचान नहीं कायम करता।

नाजी हिन्दू तब तक सवल रहेगा जब तक दलितों में अपने अहिन्दू की पहचान कायम नहीं हो जाती है। हिन्दू की ताकत का रहस्य केवल दलितों की खोई गई पहचान है। दलितों की अपनी अहिन्दू पहचान न बनने से दलित मुसलमान दोनों मारे जा रहे हैं। दलितों को गुमराह कर पहले हिन्दू मुसलमानों को मारता है और जब मुसलमानों के बाद वही हिन्दू दलितों को मारता है गुमराह मुसलमान उसे हिन्दू मानकर चुप रहता है। इस प्रकार 15 प्रतिशत हिन्दू 30 प्रतिशत दलित और 20 प्रतिशत अल्संख्यक दोनों को मारता है।

हिन्दुओं का यह 'गर्व से कहो हम हिन्दू है' का नारा दलितों की तबाही का पैगाम है। इससे दलितों की अलग पहचान को मिटाने की साजिश की जाती है। दलित अपनी अलग पहचान न बना पाने के कारण की तबाह है, हिन्दू का गुलाम है और यातनाओं का भुक्तभोगी है। उसे यह समझना होगा कि हिन्दुओं का यह नारा मुसलमानों की तबाही का भी कारण है यह बात मुसलमानों को भी जानना होगी।

अब प्रश्न उठता है इन हिन्दू नाजियों के नाखूनों से कैसे बचा जाय जो दलितों को लहूलुहान करते हैं। इस सारी बीमारी का एक ही निदान है कि दलितों की अलग पहचान बनाई जाय और 'गर्व से कहो हम हिन्दू है' के झूठे नारे के झांसे से बचाया जाय, अन्य गैर हिन्दू धर्मावलम्बियों को अपनी मानसिकता बदलनी होगी और दलितों की अलग पहचान बनाने में सहयोग करना होगा इसमें उनका भी हित है।

दलितों को चाहिए कि वे गुमराह करने वाले इस हिन्दू नारे (गर्व से कहो हम हिन्दू हैं) से दूर रहें। तुम हिन्दू नहीं हो, तुम्हारी अलग पहचान है इसे बनाने की आवश्यकता है। आज जो जगह–जगह तुम्हें पीटा जा रहा है उससे मुक्ति तभी मिलेगी और तभी दलितों के साथ गैर हिन्दू धर्मावलम्बी बन्धुओं को भी हिन्दू आतंकवाद से मुक्ति मिलेगी।

दलितो! गर्व से कहो हम हिन्दू नहीं हैं।

साभार :
गर्व से कहो हम हिन्दू नहीं है
पेज संख्या 92 से 103 तक
एस.एल.सागर

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

जातिगत भेदभाव

मनुष्य समाज में जातिवाद का स्वतः अविर्भाव नहीं हुआ। दण्ड विधान की नियमावली के अन्तर्गत इस संस्था का उदय हुआ है। बलवान द्वारा निर्बल पर शासन जातिवाद का आधार है। जातिवाद की भावना स्वयं प्रमाणित करती है कि मनुष्य समाज पूर्ण–रूपेण सभ्य नहीं है। जन्मजात जातिवाद का क्या औचित्य है? इस बात का कोई प्रमाण नहीं दे सकता कि कोई व्यक्ति किसी एक जाति से मानवोचित वृत्ति, चरित्र तथा बुद्धि प्राप्त करने की क्षमता नहीं रखता। यह प्रकृति के नियम के विरूद्ध है। जन्म के समय समानता होने पर भावी जीवन में असमानता का पाठ पढ़ाया जाता है।

भले आदमी जातिवाद (वर्ण–व्यवस्था) को समाप्त कर देना उचित समझते है। यगु–युगान्तरों से इस ओर सतत प्रयत्न जारी है। परन्तु हमें कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं होता। हृदय के सूक्ष्मान्वेषण व राष्ट्रीय आवश्यकता द्वारा धार्मिक श्रद्धा में परिवर्तन होने की मुझे कोई आशा नहीं है। प्रत्येक जाति की जनसंख्या के अनुपात से उनके जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिनिधित्व देकर सरकार इस बीमारी को दूर कर सकती है। भौतिक पदार्थों के उपयोग में समानता का व्यवहार उनके स्तर को ऊँचा करेगा और इस स्थिति में ऊँच–नीच का भेद–भाव मिटेगा, जातिवाद रूपी महल गिरेगा।

समान प्रतिनिधित्व के कारण सबल निर्बलों का शोषण नहीं कर पायेंगे। यह माँग समाज–सुधारकों के क्षेत्र से बाहर नहीं है। कुछ राष्ट्रीय जन इस बात का विरोध करते हुए कहते हैं कि इसके द्वारा जातिगत भेद–भाव और अधिक बढ़ेगा। वे नीची जाति के साथ समानता के व्यवहार की दलील इसलिए देते हैं, जिससे अमीरों को लाभ हो। इसके अतिरिक्त कुछ ऐसी धार्मिक तथा मनोवैज्ञानिक रूकावटें हैं, जो नीची जाति को आगे बढ़ने से रोकती हैं और उच्च जाति को आगे बढ़ने को प्रोत्साहित करती हैं। इसी कारण जनसंख्या के अनुपात से प्रतिनिधित्व होने पर जाति–भेद समाप्त हो जायगा।

अस्पृश्यता

यह बात असंगत है कि पारस्परिक छुआछुत से मनुष्य अपवित्र हो जाता है। जिस देश में ऐसी प्रथा चालू हो उस देश को किसी जल–प्रलय और अग्नि से नष्ट हो जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में जबकि अस्पृश्यता युगों से चली आ रही हो और समझ से बाहर हो, तो संसार में यह कैसे सम्भव हो सकता है कि हम ईश्वर की कृतज्ञता, दया आदि गुणों का ज्ञान करते रहें और उसकी आराधना के लिए तत्पर रहें। अस्पृश्य लोगों के लिए क्या यह वांछनीय नहीं है कि वे शक्ति अथवा हिंसा के बल पर इन विषमताओं से स्वतंत्रता प्राप्त करें या इस प्रयत्न में अपने को समाप्त कर डाले। जिस देश में ऐसी प्रथा का चलन हो, क्या वह देश राजनीतिक स्वतंत्रता, तथा स्वराज्य की अपेक्षा कर सकता है? कुछ लोगों का कहना है कि राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के बाद ये असमानताएं स्वतः दूर हो जाएँगी परन्तु वे इस बात को भूल जाते है कि अस्पृश्यता उस युग में भी थी, जब भारत स्वतंत्र था और राम और हरिश्चन्द्र जैसे देवतुल्य राजाओं द्वारा यह देश शासित था। अस्पृश्यता का कारण राजनैतिक दासता नहीं, यह तो केवल मात्र हिन्दू–धर्म की देन है। समाज–सुधारकों का यह परम कर्तव्य है कि वे इस अस्पृश्यता–रूपी राक्षस का हनन कर डालें। यदि आवश्यकता पड़े तो हिन्दू–धर्म को भी नष्ट कर डालें।

शिक्षा

सामाजिक सुधार के अन्तर्गत शिक्षा के विषय का ज्ञान भी अनिवार्य है। प्रकृति और सामान्य मानव चरित्र का संबंध शिक्षा से है। शेष सब चमत्कार ही कहा जा सकता है। ''तिरूक्कुरम'' का कथन है, ''जो मनुष्य यह जानता है कि मानव जीवन का उपयोगी अंग क्या है, वह जीवित है, शेष मनुष्यों की गणना मृतकों में है। (214) जो मनुष्य संसार में समन्वयपूर्वक रहना जानते हैं वे संसार की बहुत–सी बातें समझ जाते हैं, अन्य पुरूष नहीं। (140)'' शिक्षा में व्यावहारिक तथा प्राकृतिक तथ्यों की जानकारी आवश्यक है। आजकल जो कुछ सिखाया जाता है, वह सब हमारे मौलिक सिद्धान्तों के विपरीत है। वर्तमान शिक्षा उस शोषक वर्ग के हित में हैं, जो दूसरो के श्रम पर जीवित हैं। संक्षेप में, मैं यह कहूँगा कि देव–आराधना, धार्मिक कृत्य, शासकों की पूजा आदि कृत्य जो मानसिक दासता के प्रतीक हैं, शिक्षा के क्षेत्र में अवांछनीय हैं। इसके अतिरिक्त स्त्रियों को शिक्षा दी जानी चाहिए। अस्पृश्य तथा अन्य पिछड़ी जातियों को भी शिक्षा के अवसर प्रदान किये जाने चाहिए और जो लोग पवित्रता और बुद्धिमत्ता का दावा जन्म से करते हैं, उन्हें इस शिक्षा से वंचित कर देना चाहिए। कम से कम 15 वर्ष तक उच्च वर्ग के लोगों का कालिज और टेक्निकल स्कूलों में प्रवेश रोक देना चाहिए। मैं यह अनुभव करता हूँ कि ईमानदार सरकार को दृढ़तापूर्वक कदम उठाना चाहिए यदि यह सामाजिक समानता की स्थापना वास्तविक रूप में करना चाहती है और वर्ण–व्यवस्था को भंग करना चाहती है। समाज–सुधारकों का एक महान कर्तव्य हो जाता है कि वे ऐसा करने के लिए सरकार को विवश कर दे।

अन्ध–विश्वास

अन्ध–विश्वास और मिथ्या दर्शन के व्यवहार को समाज से निकाल देने की बात समाज–सुधारकों के क्षेत्र के अन्तर्गत है। यह बात सामान्य रूप से सब जगह मान्य है। जो लोग इन अन्ध–विश्वासों के चलन का लाभ उठाकर शोषण करते हैं, वे ही लाभान्वित होते हैं और दूसरा कोई नहीं। साहस और दृढ़ विश्वास के अभाव में दूसरे लोग इस स्थिति को बदलने में असमर्थ हैं। ईश्वर, धर्म, दया ही केवल अन्ध–विश्वास को प्रोत्साहित नहीं करते बल्कि भले और बुरे दिनों का विश्वास संकल्प, उपवास, तीर्थ–पर्यटन, धार्मिक स्थान और साधुओं की प्रशंसा आदि कृत्य भी अन्ध–विश्वास के प्रचार में सहायता पहुँचाते हैं, जिसके कारण मनुष्य की शक्ति, बुद्धि, धन तथा समय का अपव्यय होता है। यद्यपि भारत, प्राकृतिक साधनों से भरपूर है फिर भी वह दासता, निर्धनता और पिछड़ेपन के बन्धनों से बँधा हुआ है। इसका एक मात्र कारण मनुष्यों का अन्ध–विश्वास ही है। संसार के कुछ अन्य देशों ने, जो बहुत पिछड़े हुए थे, कुछ वर्षों के अन्दर कला और विज्ञान में भारी उन्नति की है, क्योंकि उन्होंने इन अन्ध–विश्वासों को जड़–मूल से नष्ट कर दिया है।

हमारी जनता इन अन्ध–विश्वासों को दूर करने के लिए तत्पर नहीं होती। ईश्वर, धर्म, पुराण और स्मृति अपना विरोध प्रकट करते हैं। ''हमारे पूर्वजों का चलन'' इसका सबसे बड़ा विरोध है। करोड़ों रूपया इनके व्यवहार में नष्ट हो जाता है। भारतवर्ष में कुछ ऐसे मंदिर हैं, जिनकी वार्षिक आय करोड़ों रूपया है। यह अपार धनराशि निरर्थक धार्मिक कृत्यों तथा कुछ शोषक जनों के हितार्थ खर्च कर दी जाती है। पुराण, आगम–शास्त्र, आचार्यों की कथाएं, शुभ दिवस, धार्मिक स्थान तथा रीति–रिवाज इन विश्वासशील मनुष्यों को धोखा देते हैं। यहाँ तक कि देशी और विदेशी सरकारें भी जनता के विश्वास का शोषण करती है। भारत की रेलों का उदाहरण लीजिए। यह कोई भी नहीं कह सकता कि रेल के अधिकारीगण इन धार्मिक स्थानों, धार्मिक क्रिया–पद्धतियों तथा तीर्थ यात्राओं में अटूट विश्वास करते हैं। फिर भी आप देखिये, रेलवे विभाग क्या करता है? 'थुला–स्नानार्थ अवश्य आइये'', ''बैकुंठ एकादशी आपको आमंत्रित करती है'', ''आदि–अमावस्या के हेतु धनुष कोटि अवश्य पधारिये'', ''थिरूवन्नामुलाई में कार्तिकेय दीपम के दर्शनार्थ हम आपका आह्वान करते है'', ''क्या आप हरिद्वार कुम्भ–मेला में नहीं आयेंगे?'', ''कुम्बा'' कोनम में महामाघम के लिए पधारिये आदि विषयक विज्ञापन, समाचार पत्रों तथा स्टेशनों पर लगे विज्ञापन पटों द्वारा चारों ओर प्रसारित किये जाते हैं और इन विज्ञापन पटों में जनता का ध्यान आकर्षित करने और उसको धोखा देने के हेतु किसी सुन्दर नारी का चित्र भी अंकित कर दिया जाता है। ऐसा वे जनता को सीधा स्वर्ग में पहुँचाने के लिए नहीं करते। यह सब आप जानते हैं कि ये सब धन अर्जित करने का एक साधन ही है। सरकार को जो भी कर–रूप में दिया जाता है, उससे कहीं अधिक जनता इन तीर्थ यात्राओं, धार्मिक अनुष्ठानों तथा झाड़–फूंक और ताबीजों में व्यय कर देती है। जो मनुष्य सरकार को दोष दिया करते हैं कि उसने जन–कल्याण के लिए यह नहीं किया और वह नहीं किया, वे उपर्युक्त प्रकार के अपव्यय की तनिक भी चिंता नहीं करते। वास्तव में अर्थशास्त्रियों, राजनीतिज्ञों तथा पत्रकारों द्वारा सरकार की भूलों की आलोचना करना अधिक सरल है बजाय इसके कि वे इन अन्ध–विश्वासों के विरूद्ध अपनी आवाज बुलन्द करें जिस पर जनता की एक बहुत बड़ी धन–राशि का अपव्यय हो रहा है। देश में इस बात की कमी है कि इन अन्ध–विश्वासों के कार्यों के सरकार जरा भी अपना हस्तक्षेप कर सके।

अन्ध–विश्वासों के कार्यों में व्यय की जाने वाली धन–राशि का उपयोग यदि जन–कल्याण के हेतु हो सके, तो हमारी अशिक्षा का अनुपात शीघ्र ही घट जायेगा। अशिक्षा, निर्धनता तथा बीमारी का एक मात्र कारण अन्ध–विश्वास है।

ऐसे समाज सुधारक बहुत हैं, जो मंच पर खड़े होकर ''परो–पदेशे पॉडित्यम'' की बात करते हैं, परन्तु वास्तव में वे स्वयं अपने कथित मार्ग का अनुसरण नहीं करते। यथार्थता का सामना करने के लिए उनमें घबराइट तथा अवरोध उत्पन्न हो जाता है। अन्ध–विश्वासों को बनाये रखने के लिए शोषित वर्ग कभी भी चैन से नहीं बैठ पाता। लगभग सभी शैव, वैष्णव, सिद्धान्ती आदि धार्मिक सम्प्रदाय, गोष्ठियों का आयोजन करते हैं तथा रामायण, महाभारत, थेवेरम पर कलकक्षेपम् की कोई कमी नहीं रहती। इन भयंकर विपरीत शक्तियों का सामना करने के लिए सुधारकों को अधिक वेग से काम करना होगा और अपना मस्तिष्क दृढ़ बनाना होगा। धर्म और ईश्वर में व्याप्त अन्ध–विश्वास की शक्ति को अत्यल्प समझते हुए इसे अनंत शक्ति तथा नित्य मानना बुद्धि का दिवालियापन है और असफलता को वरण करना है। अन्ध–विश्वास का व्यवहार एवं श्रद्धान युग–युगान्तरों से चला आ रहा है और इसके समर्थन में एक विशाल साहित्य है, यह कथन सत्यता का प्रमाण उपस्थित नहीं करता। संसार उन महापुरूषों एवं उनके द्वारा सम्पादित उनके उन कार्यों से भरपूर हैं, जिन्होंने समाज की पुरानी जीर्ण–शीर्ण प्रयासों को तोड़ कर सफलता प्राप्त की और

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

मनुष्यों के रहन–सहन में परिवर्तन कर दिया।

किसी व्यवस्थित हृदयग्राही पद्धति द्वारा समाज में सुधार किया जा सकता है, ऐसा मुझे अब विश्वास नहीं रहा। मैं अनुभव करता हूँ कि हेतुवाद और समाजवाद का दावा करने वाली हमारी यह तानाशाही सरकार ही इस ओर कुछ कर सकती है। यह सरकार वर्ण–व्यवस्था को हटाने के लिए वचनबद्ध है, अतएव वह ऐसी पुस्तकों तथा साहित्य के चलन पर प्रति–बन्ध लगा वे, जिसमें वर्ण–व्यवस्था की प्रशंसा की गई हो। उन समस्त पुस्तकों की होली जला दी जाय, जो अन्ध–विश्वास और वर्ण–व्यवस्था तथा जातिगत भेद–भावों से परिपूण है। शंकराचार्य तथा मठाधिपति आदि धर्म नेताओं को, जो अब भी वर्ण–व्यवस्था का उपदेश करते हैं, तत्काल उन पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय या देश निकाला दे दिया जाय। जवाहरात तथा मूल्यवान बर्तनी के रूप में मंदिरों में जमा की हुई अतुल धनराशि जब्त कर ली जाय और उसे अशिक्षितों को शिक्षित बनाने तथा बेजोरगारी दूर करने में व्यय किया जाय। यह आवश्यक है कि जनता द्वारा ऐसी सरकार बने जो इन सुधारों को दृढ़तापूर्वक कार्यान्वित कर सके। इस प्रक्रिया में सम्भवतः बहुत से सुधारकों को अपने जीवन से हाथ धोना पड़ जाय। सबसे बड़ी बात यह है कि समाज–सुधारकों को यदि कोई नास्तिक की संज्ञा दे, तो उसे वे निर्भय होकर स्वीकार कर लें। शब्द 'नास्तिक' अथवा उसका नास्तिकता का भाव कोई अर्थ नहीं रखता। यथार्थ में बात तो यह है कि जो लोग ब्राह्मण पुरोहितों, वेदों, शास्त्रों, इतिहास, और पुराणों में विश्वास नहीं करते, उन्हें लोग नास्तिक कहने लगते हैं। आस्तिक होकर यदि कोई शोषण और अंध–विश्वास को न मिटा सका, तो नास्तिक होने में क्या बुराई है। वास्तव में मुझे पूर्ण विश्वास है कि समाज–सुधारक यदि संसार को पूर्ण–रूपेण सुधरा हुआ देखना चाहते हैं, तो उन्हें फौरन नास्तिक बन जाना चाहिए। तब ही नास्तिकता का भय दूर हो सकता है। यह सब ध्यान में रखना चाहिए कि धर्म पूरोहित तथा धनिक लोग सदैव समाजवाद, जनतंत्र और सुधारकों को शत्रु समझते हैं। यह भी ध्यान देने की बात है कि जो लोग किसी एक धर्म का दूसरे धर्म के लिए विरोध करते हैं, एक पैगम्बर या अवतार के विपरीत किसी दूसरे पैगम्बर में विश्वास करते हैं और अन्त में जनता को संकीर्ण मार्ग में ला पटकते हैं, वे ही सुधारों एवं ज्ञान के विरोधी होते हैं। इस प्रकार के झूठे प्रचार के विरूद्ध लोगों को सावधान कर देना चाहिए जिससे वे अज्ञान एवं श्रद्धा के वशीभूत होकर असत्य प्रचार तथा असत्य मार्ग–प्रदर्शन के बल पर अपना धर्म–परिवर्तन न कर लें। समस्त धर्मावलम्बी लोग एक ही कुटिल नाव के नाविक हैं। मानव जीवन के लिए धर्म परिवर्तन कोई अर्थ नहीं रखता। धर्म परिवर्तन सन्देह निवृत्ति का साधन नहीं है।

ऐसे ब्राह्मण तथा कट्टर धर्मपरायण लोगों के विषय में चेतावनी दे देना परमावश्यक है, जो अपने ही बड़ी सरलतापूर्वक महान समाज–सुधारकों की श्रेणी में रखते हैं क्योंकि उन्होंने मांस सेवन, मद्य–पान तथा किसी के भी घर खान–पान प्रारम्भ कर दिया है। कुछ लोग अपने को महान सुधारकों की गणना में इसलिए रखते हैं क्योंकि उन्होंने अपने विवाह संस्कार में अथवा वेश्या के रूप में किसी रखैल को रखने में किसी जात–पाँत का विचार नहीं किया। ये हरकतें समाज–सुधार के प्रतिरूप नहीं है। इसके साथ–साथ यह भी समझ लेना आवश्यक है कि इस वर्ण–व्यवस्था तथा जाति–गत भेद–भाव के केवल ब्राह्मणी ही दोषी है, अपितु इस प्रकार के व्यक्ति अन्य समुदायों में भी थोड़े बहुत रूप से पाये जाते हैं। जनता आलोचना करती है कि जो लोग इस जातिगत भेद–भाव के कारण ब्राह्मण–वर्ग की कटु आलोचना करते हैं, वे ही लोग अपने से निम्न स्तर की जाति के लोगों को समानता का पद नहीं देते। यह आलोचना सत्य है। इसका उत्तर मेरी समझ में यह है कि ब्राह्मण–समाज का अधिक दोषी है, क्योंकि इसके पूर्वजों ने जातिगत भेद–भाव उत्पन्न किया और पनपाया। अगर मानव समाज–रूपी सीढ़ी के अन्तिम चरण रूपी ब्राह्मण–वर्ग अपना इस विषय में सुधार कर ले, तो और दिशाओं में भी सुधार सरल हो जायेगा। मैं पुनः अपनी बात दोहराता हूँ कि बिना किसी भेद–भाद के जनसंख्या के अनुपात से समस्त जातियों को सेवालयों तथा शिक्षालयों में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।

अन्त में यह मैं कहना चाहता हूँ कि सामाजिक सुधार कर अन्तिम लक्ष्य जनता में भली आदतों का शिक्षण, ज्ञान वृद्धि तथा समानता के सिद्धान्तों का पालन आत्म सम्मान की प्राप्ति, और सत्य अर्थ में धर्म निरपेक्ष समाजवाद की स्थापना करना है।

जातिवाद और हिन्दुत्व

(कोयम्बटूर के सन् 1958 में महामानव पेरियर द्वारा गये दिये भाषण में उद्धरित)

मैं क्या हूँ? मैं क्या उपदेश देता हूँ?

प्रथम–मुझको ईश्वर तथा अन्य देवताओं में आस्था नहीं है।

द्वितीय– विश्व के संगठित धर्मों से मुझे घृणा है।

तृतीय– शास्त्र, पुराण, और उनमें वर्णित देवताओं में मेरी कोई आस्था नहीं है, क्योंकि वे सब सदोष है। उनको जलाने और नष्ट करने के लिए मैं जनता का आह्वान करता है।

मैंने यह सब कुछ कहा है और मैंने पिल्लाल्यर तथा विनायक की मूर्तियाँ तोड़ डाली हैं तथा राम के चित्र भी जला डाले हैं। मेरे इन कार्यों के बावजूद मेरी सभा में मेरे भाषण को सुनने के लिए यदि हजारों की संख्या में जनता एकत्रित होती है, तो यह स्पष्ट है कि स्वाभिमान तथा बुद्धि का अनुभव जनता में आने लगा है।

द्रविड़ कजगम आन्दोलन का क्या अभिप्राय है? इसका लक्ष्य एक ही है इस निकम्मी हिन्दू वर्ण–व्यवस्था का अन्त कर देना, जिसके कारण समाज ऊँच और नीच जातियों में बाँट दिया गया है। इस प्रकार द्रविड़ कजगम आन्दोलन उन शास्त्रों, पुराणों तथा देवी देवताओं में श्रद्धान नहीं करता जो वर्ण–व्यवस्था को येन केन प्रकारेण बनाये हुए है।

राजनैतिक स्वतंत्रता प्राप्ति के बहुत पश्चात् सन् 1658 तक वर्ण–व्यवस्था तथा जातिगत भेद–भाव की नीति ने जनता के जीवन पर अपना शासन बनाये रखने के कारण देश के पिछड़ेपन को प्रमाणित कर दिया। किसी और देश में इस प्रकार जाति विभेद के कारण जनता हजारों की संख्या में विभाजित नहीं है। आश्चर्य है कि समझदार लोग इस ओर कुछ भी ध्यान नहीं देते हैं। वास्तविक स्वार्थ तत्परता का दौर इस देश के नेताओं में है। कुछ लोग, जो राष्ट्रीयता तथा राजनीतिक पार्टी के आधार पर अपने को समाज सेवी कहते हैं, भारत की वास्तविक समस्याओं की ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते। जिन कारणों के सहारे देशवासी पिछड़ी स्थिति में हैं उन कारणों के आधार पर वे अपनी आजीविका चलाते हैं। राजनीतिक स्वाधीनता प्राप्त करने के बाद दूसरे देश के लोगों ने राष्ट्रीय विकास तथा सामाजिक सुधार की ओर बड़े वेग से उन्नति की है।

देश में द्रविड़ कजगम को छोड़कर क्या कोई दूसरी ऐसी संस्था है जिसने वर्ण–व्यवस्था को हटाने की स्पष्ट माँग की हो। कुछ ऐसे ही लोग हैं जो वर्ण–व्यवस्था का अन्त करने वाले हमारे इस आन्दोलन के प्रति हमें बधाई देते हैं और हमारी प्रशंसा करते हैं, परन्तु खुले हृदय से इस व्यवस्था के विरूद्ध जनता के सामने जाने का साहस नहीं करते। इसी कारण अन्ध–विश्वास, मिथ्या दर्शन तथा असभ्य चलन हमारे विश्वासशील लोगों पर अपना शासन जमाये हुए हैं। जिस समय भारतीय सभ्यता के शिखर पर थे, उस समय पश्चिम की जातियाँ जो असभ्य थी, अब भारतीय जातियों से कहीं अधिक सभ्य हो गई है। कुछ अधिक समय नहीं हुआ जबकि यूरोप के गौरांग लोग अपनी आजीविका के हेतु वनो में चर्म और वृक्षों की छाल से अपने शरीर को ढक कर घूमते फिरते थे। वे नदियों में मछलियाँ पकड़ते और जंगलों में शिकार खेलते थे। स्त्री–पुरूष का सम्बंध व्यभिचार–पूर्ण था। पाक विधि की जानकारी के अभाव में, वे पशुओं की भाँति कच्ची शाक भाजी खाते थे। आजकल वे क्या हैं? महान चमत्कार–पूर्ण अनेक वस्तुओं की खोज करके आज वे देवतुल्य माने जाते हैं। विद्युत, रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, रेलवे, तथा हवाई जहाज आदि का आविष्कार इन्होंने ही किया है। उन्होंने बनावटी चाँदी को आकाश में भेजा है ओर वहीं रहने के लिए घर बना रहे हैं।

यूरोप निवासियों की अपेक्षा भारतीय किस बात में कम हैं? प्राचीन काल में भारत के लोगों ने अनेक चमत्कार पूर्ण अन्वेषण किये और प्रकृति के स्वर में स्वर मिलाते रहे। लेकिन इसके पश्चात् देवी–देवताओं में मिथ्या श्रद्धान, धार्मिक अनुष्ठान, जात–पाँत भेद–भाव तथा अन्ध–विश्वास के कारण स्वतंत्र चिंतन का सदुपयोग न रहा। धर्म पुरोहितों ने विवेक तथा बुद्धि को अपनी बन्दी बना लिया। जिस किसी ने ईश्वर, देवी–देवतओं, शास्त्रों तथा पुराणों के विरूद्ध अपनी आवाज बुलंद की, उसी को नास्तिक कहकर अहिन्दू तथा समाज विरोधी प्रतिक्रियावादी की संज्ञा दी गई। 'आत्म सम्मान' आन्दोलन प्रारम्भ होने के पूर्व किसी को इन देवी–देवताओं तथा अन्ध–विश्वासों के प्रति आवाज उठाने का साहस नहीं हुआ।

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं न तो ईश्वर के अस्तित्व और न उसके नास्तित्व के विषय में कहता हूँ। मैं यह भी नहीं कहता कि इस गम्भीर समस्या पर पूर्णरूपेण मनन किये बिना जनता मेरी बात मान ले। नास्तिकता मनुष्य के लिये कोई सरल स्थिति नहीं है। कोई भी मूर्ख अपने को आस्तिक कह सकता है। ईश्वर की सत्ता स्वीकार करने में कोई बुद्धिमत्ता की आवश्यकता नहीं है। लेकिन नास्तिकता के लिए बड़े साहस प्रतिवर्ष लाखों मन खाद्यान अमेरिका तथा अन्य देशों से आयात कर देश की दिवालिया वित्त नीति को बढ़ावा दिया जा रहा है और इस प्रकार धन का बहाव बड़े वेग से देश से बाहर हो रहा है। लेकिन इसकी कोई चिंता नहीं करता।

दो हजार वर्ष पूर्व महात्मा बुद्ध ने हिन्दू–धर्म के जहरीले अंगों से छुटकारा पाने के लिए जनता के मस्तिष्क को स्वतंत्र करने का प्रयत्न किया था। उन्होंने जनता से क्यों, कैसे और क्या प्रश्न किये और वस्तु यथार्थ गुण और स्वभाव की समीक्षा की। उन्होंने वेदों की व्यवस्था की संज्ञा दी थी। उन्होंने किसी भी वस्तु पर किसी भी ऋषि तथा महात्मा का अधिकार स्वीकार नहीं किया। उन्होंने जनता को अपनी जीवित भाषाओं में आत्मचिंतन करने तथा जीवन के साधारण सत्य को समझने का उपदेश दिया। परिणाम क्या हुआ? ऐसे उपदेशकों को मौत के घाट उतारा गया, उनकी स्त्रियों का अपमान किया गया और उनके घर द्वार फूंक दिये गये। बुद्ध धर्म के लोप हो जाने के बाद भारत से विवेकवाद समाप्त हो गया। बुद्ध की जन्म भूमि पर बुद्ध धर्म का प्रसार न हो सका। यह चीन और जापान चला गया जहाँ पर इसने विध्वंस के अतिरिक्त इन देशों को महान बनाया। राष्ट्रीय चरित्र अनुशासन, शुद्धता, ईमानदारी, तथा अतिथि सत्कार में कौन देश जापान की समानता कर सकता है?

ईसा के प्रारम्भिक वर्षों में बुद्ध के बाद महान थिरूवेल्यूवर का जन्म भारत में हुआ। उन्होंने भी वही उपदेश दिया जो महात्मा बुद्ध ने दिया था। उनका अमूल्य तिरूकुरल कूड़े वाली टोकरी में फेंक दिया गया और

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

गीता तथा मनु शास्त्र का आलिंगन किया गया। हमारे देश के शंकराचार्यों का मान बढ़ाया गया बिना यह समझे कि वे देव–रहित हैं, उनमें देवताओं के कोई भी गुण नहीं हैं। आदिदेवता ने समस्त देवताओं में एक ही ईश्वर को माना है जबकि शंकराचार्य ने स्वयं अपने को ईश्वर की संज्ञा प्रदान की है। उनके लिए फिर ईश्वर की क्या आवश्यकता रही– उनके शरीर की विभूति, शक्ति के रूप में देवियों की पूजा, और गेरुआ वस्त्रों का पहनाव से सब जनता को धोखा देने और अपने शून्यवाद सिद्धान्त को छलने के निमित्त हैं।

ईश्वर किस प्रकार और क्यों जन्म–मरण करता है? समस्त देवताओं को देखो। राम का जन्म नवमी तिथि को हुआ, सुब्रामनिया का जन्म षष्ठी तिथि को हुआ, और कृष्ण का जन्म अष्ठमी को हुआ, पुराणों के अनुसार इन सब ईश्वर तुल्य देवों की मृत्यु हुई। इस कथन के उपरान्त भी हम क्या इनकी पूजा देव समझ कर करते रहें? ईश्वर की पूजा क्यों करना चाहिए? ईश्वर को भोग लगाने का क्या औचित्य है? प्रतिदिन उसका अभिषेक करके नवीन वस्त्रों से उसे क्यों अलंकृत किया जाता है? यहाँ तक कि पुरूषों द्वारा देवियों को नग्न कर स्नान कराया जाता है। इस अश्लीलता के कारण न तो देवियों को स्वयं और न उनके भक्तों को ही क्रोध आता है।

देवताओं को स्त्रियों की क्या आवश्यकता है? प्रायः वे एक स्त्री से सन्तुष्ट नहीं होते। कभी–कभी तो उन्हें रखेल या वैश्या की आवश्यकता होती है। विरूपती में क्यों देवता मुस्लिम वैश्या (नछैयर) के यहाँ जाने की इच्छा करते हैं और क्यों प्रतिवर्ष ये देवता अपना विवाह सम्पन्न करते हैं। गतवर्ष के विवाह का क्या परिणाम होता है? उनका कब तलाक होता है? कौन सा न्यायालय उनके इस विवाह विच्छेद की स्वीकृति देता है? क्या इन तमाम देवताओं के खिलवाड़ ने हमारी जनता को अधिक बुद्धिमान, अधिक शुद्ध और अधिक एकता के सूत्र में बाँधा है?

ईसाई, मुस्लिम और बौद्ध–धर्म के देवतागण दया, अनुग्रह, सुजनता तथा परोपकारिता के अवतार माने जाते हैं। क्रिश्चियन और बौद्ध–धर्म की मूर्ति पूजा इन गुणों को प्रकट करती है। हमारे देवताओं को देखिए। एक देवता एक भाला लिए हुए है, दूसरा धनुष–बाण तो दूसरे अन्य देवता गदा, खंजर तथा ढाल से सुशोभित हैं। ये सब क्यों? एक देवता के सदा अंगुली के चारों ओर चक्र नाचा करता है। किसका वध करने के लिए? अगर प्रेम और अनुग्रह मनुष्य के हृदय पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, तो इन हिंसक शास्त्रों की क्या आवश्यकता है? स्पष्टतः हमारे देवता बुराई पर विजय प्राप्त करने के हेतु इन हिंसक अस्त्रो का उपयोग करते है। क्या इनमें उन्हें सफलता मिली है? हम आजकल के समय में रह रहे हैं। क्या यह वर्तमान समय इन देवताओं के लिए उपयुक्त नहीं है कि वे आधुनिक अस्त्रो से अपने को सुसज्जित करें और धनुष बाण के स्थान पर मशीन–गन तथा बन्दूक धारण करें? रथ को छोड़कर क्या श्रीकृष्ण टैंक पर सवार नहीं हो सकते? मैं पूछता हूँ कि जनता इस एटोमिक युग में देवताओं पर विश्वास करते हुए लजाती क्यों नहीं है।

जाति और चरित्र

('अरिविन कुमार' पुस्तक से अनूदित)

अच्छा चरित्र क्या है? मानव चरित्र के विषय में वर्ण–व्यवस्था ने हमारे विचार उलट दिये हैं। प्रत्येक जाति के लिए चरित्र संहिता का सिद्धान्त जन्म पर आधारित है। शताब्दियों तक इस प्रकार व्यवहार करते हुए इस जीवन ने हिन्दू–धर्म को अज्ञानांधकार के गहनतम गड्ढे में ढकेल दिया है और चारित्रिक एकता एवं एकरूपता को छिन्न–भिन्न कर दिया है। क्रमिक असमानता हिन्दू रक्त में इतनी समा गई है आंग्ल भाषा के शिक्षण तथा उच्च स्तर प्राप्त करने के पश्चात् भी उसने सामान्य बुद्धि को कुंठित कर दिया है। इसलिए यह एक सामान्य बात हो गई है कि कालेज के प्रोफेसर्स, इंग्लैंड में शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात भारत में लौटे हुए विद्वान, तथा विशेषज्ञ, राजनैतिज्ञ, न्याय विशारद अपने–अपने घरों में उसी तरह का व्यवहार करते हैं, जिस भाँति दूर गाँव में रहने वाला एक किसान या अनपढ़ पुरोहित व्यवहार करता है। ऐसे लोग कट्टर प्राचीन परम्पराओं का बहाना लेकर अपने जीवन की असंगति की बात बिना विचारे कह उठते हैं और बड़ी जल्दी अपने घर की बड़ी–बूढ़ी स्त्री के मत्थे सारा दोष मढ़ देते हैं। यथार्थता तो यह है कि ऐसे लोगों ने अपनी विचार–धारा को व्यवहार में लाने का साहस नहीं होता और गृह शांति के नाम पर वे शीघ्र ही अन्ध–विश्वासों के शिकार बन जाते हैं। इस प्रकार इनकी शिक्षा बेकार हो जाती है। अच्छी नौकरी और सरलतापूर्वक धनोत्पादन ही एक मात्र शिक्षा का उद्देश्य नहीं है। इसीलिए सब शिक्षित व्यक्ति बुद्धिमान नहीं होते। बुद्धि और संस्कृति स्वतंत्र रूप से आती है। इसमें शिक्षा की अपेक्षा सर्वथा नहीं है। मनुष्य को बुद्धिमान तथा सुसंस्कृत बनाने में शिक्षा सहायता प्रदान करती है। बुद्धि और संस्कृति की उन्नति की ओर बढ़ने के लिए वर्ण–व्यवस्था तथा धर्म शिक्षित मनुष्यों को पीछे खींचते हैं।

नारियों को अपने आश्रित करने तथा अपने नियंत्रण में रखने के लिए संसार के मनुष्यों ने उनके सतीत्व और प्रेमरूप गुण की आवश्यकता पर बल दिया है। निर्धन तथा पतितों का शोषण करने के हेतु इसी प्रकार नैतिकता का आलम्बन पकड़ा गया है। सतीत्व, पवित्रता, प्रेम, सत्य, न्याय, नैतिकता ये सब एक ही जननी की सन्तानें हैं। चतुर और शक्ति सम्पन्न पुरूषों के लाभार्थ अपने चलन की रूपरेखानुसार उपर्युक्त बातें तोड़–मरोड़ कर नीची जाति के लोगों के सन्मुख रखी जाती हैं। यह कहा जाता है कि कानून का निर्माता मनुष्य है अतएव नारियाँ मनुष्यों के आश्रित बनाई गई हैं। यह भी कहा जा सकता है कि निर्बल और पतितों को पराधीन करने के हेतु इन कानूनों का निर्माण हुआ है।

जिस प्रकार बच्चों को भय का भूत दिखाकर अपने नियंत्रण में किया जाता है, उसी प्रकार सामान्य जन को भी धर्म तथा नीति का भय दिखाकर धर्माचरण का पाठ पढ़ाया जाता है जिससे वे लोग शोषक समाज से पृथक रह सकें और उन्हें देवता की संतति की संज्ञा देते रहें। अब तक बच्चों की समझदारी में विकास नहीं होता, तभी तक वे भय तथा विश्वास के समक्ष अपने घुटने टेके रहते हैं। इसी प्रकार शोषक समाज तभी तक अपनी विशिष्ट सुख सुविधाओं को सुरक्षित रख सकता है, जबतक कि वह सामान्य जन को उनके अधिकार तथा सत्याचरण के विरूद्ध अन्धकार में रखे रहता है अच्छे और बुरे चरित्र का मापदंड संस्था की आंतरिक योग्यता नहीं अपितु उसकी शक्ति और चतुराई है।

साधारण रूप से वेश्या–वृत्ति, झूठ, चोरी और धोखा दुश्चरित्रता की निशानी है, परन्तु ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा जो अपने दैनिक जीवन में इनमें से किसी एक का शिकार न हो। कुछ मामलों में उपर्युक्त बातें ढकी–मुँदी रहती हैं, और कुछ मामलों में स्पष्ट नहीं हो पाती। किसी मनुष्य के बीते समय की झलक प्रकट कर देती है कि उस मनुष्य के जीवन में कितने अवसर ऐसे आये हैं जबकि अपने लाभार्थ उसने अपने गुणों को एक तरफ रख दिया हो। हमारे नजदीकी रिश्तेदारों, मित्रों अथवा परिचित व्यक्तियों के चरित्र का जरा सा भी विश्लेषण उनके अभद्र व्यवहार तथा बेइमानी के ढंगों को प्रकट कर देता है।

मनुष्य प्रायः अपनी आजीविका के लिए वाणिज्य–व्यापार कृषि, जन सेवा, उत्पादन तथा अन्य व्यवसाय आदि पर निर्भर रहता है। इनमें से कौन ऐसा है जो आजीवन सदाचारपूर्वक रह सकता है? यहाँ हमारा ध्येय गुण और अवगुण की व्याख्या करना नहीं है। मतलब हमारा केवल मात्र यह जानना है कि कौन ऐसे उच्च व्यवस्था, पद तथा शक्ति सम्पन्न व्यक्ति हैं जो पतित तथा अभागे पुरूषों के समतुल्य अपने को अधिक गुणवान तथा चरित्रवान समझते हैं।

एक पूँजीपति एक कारीगर को उसके किसी कार्य के लिए बुरा–भला कहता है, जबकि वह स्वयं स्पष्ट रूप से उस काम को करता हुआ पाया जाता है। एक सरकारी कार्यालय में एक अधिकारी किसी एक क्लर्क को उसकी भूलों और दोषों के कारण अपराधी ठहराता है, जबकि वह स्वयं उन दोषों से वंचित नहीं होता। कठिनाई केवल इतनी है कि अधिकारी के सामने बेचारा क्लर्क कुछ कह नहीं सकता। फिर गुण का उपदेश किसके लिए दिया जाता है? इसी प्रकार पिता पुत्र को उन बुराइयों के कारण धमकाता तथा बुरा भला कहता है, जिन्हें वह स्वयं करता है। बुरी आदतों वाले व्यक्ति ही दूसरे लोगों में उन्हीं बुरी आदतों की प्रतिस्थापना कर उनकी आलोचना करते पाये जाते हैं। यह तथ्य पुरूष के किसी एक वर्ग विशेष में ही नहीं, अपितु मानव मात्र में पाया जाता है। मैं जिस बात पर बल देना चाहता हूँ वह यह है कि गुण और सदाचार वही कहलाने योग्य हैं जिन्हें हम अपने और पराये में पाने व होने की इच्छा रखते हैं। इनका उपयोग प्रायः उन लोगों को धोखा देने में रहता है जो बेचारे गरीब और समाज के स्तर से निम्न कोटि के हैं और समाजवादी समाज की स्थापना करने में तनिक भी अभ्यस्त नहीं है। इस प्रकार के अनमेल आचरण के लिए हिन्दू–धर्म की वर्ण–व्यवस्था ही जिम्मेदार है। जो किसी एक जाति के लिए गुण है वही दूसरी जातियों के लिए दोष समझा जाता है। दुराचरण किसी जाति विशेष के लिए आज्ञा पाने योग्य है और दूसरी जातियों में उनका निषेध किया जाता है। दूसरों के साथ वही बर्ताव करो जो तुम दूसरों से अपने लिए करवाना चाहते हो। इस सिद्धान्त का प्रतिपालन हमारी वर्ण–व्यवस्था के कारण नहीं हो पाता।

अगर यह बात सत्य है कि दुराचार नाम की कोई वस्तु है, और अगर चोरी, झूठ, और मायाचारी उस दुराचार के अंग समझे जाते हैं, तो इन दुराचरणों के शिकार गरीब तथा अनपढ़ जनता की अपेक्षा राजा–महाराजा, पुरोहित, व्यापारी, वकील, राजनीतिज्ञ आदि व्यक्ति अधिक देते, नीचा दिखाते तथा उनकी उन्नति में बाधा पहुँचाते हैं। यह अतिशयोक्ति नहीं होगी यदि मैं यह कह डालूँ कि सामान्य रूप से दुराचरण इस शोषक वर्ग के दुराचरण का अंग–प्रत्यंग है। बड़े आश्चर्य की बात तो यह है कि जनता उनका अनुकरण करती है और उन्हें आदर और आराधना के योग्य समझती है। यह सब जनता की अज्ञानता और बुद्धि विहीनता का परिचायक है।

जिस बात का उपदेश हम दूसरों को करते हैं, उसका पालन यदि हम स्वयं करें, तब उसे सदाचार की संज्ञा दी जा सकती है। जिस व्यवहार की अपेक्षा आप दूसरों से चाहते हैं, वही व्यवहार आप दूसरों के साथ करना सीखें। यह हिन्दुओं के लिए क्रान्तकारी सिद्धान्त है। इसकी उपलब्धि केवल सुधारवादी नीति से नहीं बल्कि क्रान्ति से ही हो सकती है। कुछ ऐसी बातें हैं, जिनका सुधार नहीं हो सकता, परन्तु अन्त अवश्य हो सकता है। हिन्दुत्व ब्राह्मण उनमें से ऐसा ही एक है।

साभार :
ई.वी.रामस्वामी नायकर
पेज संख्या 109 से 131 तक
अनुवादक श्री दयाराम जैन

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।

हमारे आदर्शहीन आदर्श समाज पर क्यों थोपे जाते हैं?

किसी देश के समाज व संस्कृति का जो स्वरूप बनता है उसका आधार वे आदर्श होते हैं जिन्हें महापुरूष कहा जाता है। ये महापुरूष धार्मिक, राजनीतिक व सामाजिक किसी भी क्षेत्र के हो सकते है। देश का इतिहास, धर्म और संस्कृति इन्हीं की देन होते हैं। इन्हीं के कार्यों और प्रेरणा से अद्‌भुत वहां के जनजीवन का एक निश्चित स्वरूप बनता है। अगर ये आदर्श सचमुच में महान होते हैं तो शाश्वत ढंग की ऐसी धर्म व समाज व्यवस्था देश में कायम कर जाते हैं जिसमें समाज का सब से निर्बल वर्ग न केवल समान रूप से धर्म और न्याय का अधिकारी होता है वरन उसके लिए विशेष शक्ति और गति प्राप्त करने का संरक्षण व प्रबंध भी होता है।

इसके विपरीत अगर आदर्श स्वयं किन्हीं निहित स्वार्थो को ले कर चलते हैं या किन्हीं दूसरों के स्वार्थों को ले कर चलते हैं या किन्हीं दूसरों के स्वार्थों के लिए थोपे जाते हैं तो अपनी विशिष्ट कुंठाओं से ग्रस्त जिन व्यवस्थाओं को वे जन्म देते हैं वे आगे चल कर समाज घातिनी सिद्ध होती है। जनजीवन विषाक्त होता जाता है। धीरे धीरे उस देश में रहने वालों में न्याय और धर्म के प्रति सजगता समाप्त हो जाती है।

दुर्भाग्य से हिंदू धर्म में आदर्शों का बहुत कुछ ऐसा ही स्वरूप रहा है। ऐसा कई कारणों से हुआ है। एक महत्वपूर्ण कारण तो यह रहा कि हमारे आदर्श निर्बल और पददलित वर्ग के प्रतिनिधि नहीं रहे। वे या तो राजा थे या क्षत्रिय व ब्राह्मण वर्ग में से। उन्हें पद्‌दलितों की पीड़ा का कोई भान ही नहीं था। नीचे वाले वर्ग को न्याय और प्रतिष्ठा दिलाने में उन की कोई रूचि नहीं थी। भेद और घृणा के विरूद्ध वे कभी लड़े नहीं, बल्कि उसकी रक्षा ही की।

मर्यादा पुरूषोत्तम कहलाने वाले राम को जब यह पता चला कि उनके राज्य में एक शूद्र शंबूक तपस्या कर रहा है, तो उन्होंने उसका सिर काट डाला। श्रेष्ठ धनुर्धर अर्जुन को जब पता चला कि एकलव्य नामक शूद्र उन्हीं की तरह धनुर्विद्या में कुशल हो गया है, तो उन्होंने गुरू से कहकर गुरू दक्षिणा के नाम पर उसका अंगूठा ही कटवा कर उसे सदा के लिए इस विद्या के उपयोग से वंचित कर दिया।

रामायण और महाभारत काल के इन दो उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि समाज की मेहनत और ईमानदारी से सेवा करने वालों की क्या स्थिति थी। यही स्थिति स्त्रियों की थी। रामायण काल में सीता और महाभारत काल में द्रौपदी इसके उदाहरण हैं। समाज व धर्म के ठेकेदारों को इस देश में स्त्रियों और शूद्रों का उभरना कभी अच्छा नहीं लगा। हमारे आदर्शों ने भी इन्हीं ठेकेदारों को खुश रखने का काम किया।

इसका एक कारण यह भी रहा कि हमारे आदर्श ऐतिहासिक पुरूष नहीं रहे। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राम, कृष्ण, गणेश, हनुमान, दुर्गा, सीता, राधा, सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती आदि; जिनका हिंदू समाज व संस्कृति में बहुत महत्त्व है, ऐतिहासिक कम और पौराणिक अधिक हैं। इतिहास का आदर्श पुरूष अपने समाज की उपज होता है। ईसा मसीह, मोहम्मद पैगंबर तथा महात्मा बुद्ध की तरह तत्कालीन समाज व धर्म व्यवस्था में जो दोष आ जाते हैं उन्हें दूर करने के लिए वह पैदा होता है। उस युग में प्रतिस्थापित निहित स्वार्थों से टक्कर लेने की शक्ति व साहस उनमें होता है और इसी से वे महान कहलाते हैं। वे मानव समाज के सुखदुख को समझने वाले और न्याय दिलाने वाले होते हैं। उनके व्यक्तित्व व आचरण का प्रभाव इतना तीव्र, तीखा और सच्चा होता है कि आगे आने वाली पीढ़ियां स्वभावतः उनका अनुकरण करती चलती हैं।

इसके विपरीत पौराणिक आदर्श किसी वर्ग विशेष की स्वार्थ पूर्ति के लिए जनजीवन पर थोपे हुए होते हैं। समाज व धर्म के यथास्थिति स्वरूप को कायम रखना ही उनका उद्देश्य होता है। उनका आदर्श थोपा हुआ होता है और दिखावे की चीज रह जाता है। उसकी पकड़ ढीली होने से वह जनजीवन में उतर नहीं पाता। जनजीवन में उतरने के लिए कई दार्शनिक व धार्मिक व्यवस्थाएं करनी पड़ती हैं। अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के लिए उन्हें ऐसा करना पड़ता है, अन्यथा थोड़े दिनों के बाद उनके स्वार्थों की पोल खुलने का डर रहता है।

यही कारण है कि शूद्र वर्ग को जन्मजन्मांतर तक शूद्र रखने के लिए कर्म, पुनर्जन्म और मोक्ष के सिद्धांतों को समाज में स्थापित किया गया और उन्हें हमारे सामाजिक व धार्मिक जीवन का इतना महत्त्वपूर्ण अंग बना दिया गया कि सारा शूद्र कहा जाने वाला समुदाय आत्मसम्मान से हीन पशु तुल्य जीवन बिताने के लिए बाध्य हुआ। उन्हें सभी प्रकार के अधिकारों से विहीन करके उनके मन में विद्रोह पैदा न हो जाए इसकी भी पक्की व्यवस्था कर दी गई।

धर्म व समाज के रक्षक वर्ग ने अपने संकुचित व निकृष्ट स्वार्थों की पूर्ति के लिए, अपने देश के आदर्शों का जैसा दुरूपयोग किया उसकी मिसाल दुनिया के इतिहास में कहीं भी नहीं मिलेगी। दूसरे देशों ने अपने संकुचित स्वार्थों व धर्म की रक्षा के लिए रक्त बहाने की बेवकूफी जरूर की लेकिन धर्म के नाम पर, अपने ही धर्मवलंबियों को अपने स्वार्थ एवं अहं की रक्षा के लिए जन्मजन्मांतर तक शोषित रखने का निंदनीय कार्य कभी नहीं किया। उनके कार्यों में नादानी रही, हमारे कार्यों में धूर्तता। धोखा देकर अधर्म को धर्म मनवाने की जो व्यवस्था हमने सौंपी वह अत्यंत ही हेय कार्य था। उनके निहित स्वार्थों का इसी से पता चलता है कि जिस किसी ने ब्राह्मण संस्कृति का विरोध किया उसको यहां टिकने नहीं दिया गया। महात्मा बुद्ध के धर्म तक को यहां से विदा लेनी पड़ी।

सबसे दुर्भाग्यपूर्ण बात तो यह रही कि हमारे आदर्श दूसरे देशों के आदर्शों की तुलना में चारित्रिक विसंगतियों के अधिक शिकार रहे। राम ने एक शूद्र शबरी को गले लगाया तो दूसरे शूद्र (शंबूक) का वध कर दिया। एक तरफ अपनी पत्नी को पवित्र भी माना तो दूसरी ओर उसकी अग्निपरीक्षा लेकर भी उसे गर्भावस्था में वनवास दिया।

काम का मर्दन करने वाले शिव विष्णु के मोहिनी रूप के पीछे कामासक्त होकर पागल की तरह ऐसे भागे कि मार्ग में ही उनका वीर्य स्खलित हो गया। विष्णु ने जालंधर को मारने के बहाने उसकी सतीसाध्वी पत्नी के साथ छल करके कुकर्म किया। ब्रह्माजी की नीयत अपनी लड़की सरस्वती के प्रति भी साफ नहीं थी। श्री कृष्ण की रासलीलाओं ने हिंदूधर्म का जो नुकसान किया वह सर्वविदित है ही।

यही हाल हमारे अन्य देवीदेवताओं व ऋषिमुनियों का रहा। इंद्र ने अपनी गुरूपत्नी अहिल्या के साथ, चंद्र ने देवगुरू बृहस्पति की पत्नी तारा के साथ, सूर्य ने कुमारी कुंती के साथ, पराशर ने धीवर कन्या सरस्वती के साथ, विश्वामित्र ने मेनका के साथ, भारद्वाज ने घृताची के साथ तथा वशिष्ठ ने यक्षमाला के साथ जो अपने अनैतिक व्यवहार का प्रदर्शन किया वह किसी भी स्थिति में गर्व करने की बात नहीं हैं।

स्त्रियों में यद्यपि सीता और सावित्री को आदर्श माना गया है और हिंदू शास्त्रों में जिन पंचकन्याओं की महिमा गाने व स्मरण करने का विधान है वे हैं अहल्या, मंदोदरी, तारा, कुंती व द्रौपदी। संयोग से ये सभी एक से अधिक पति वाली थीं। समझ में नहीं आता कि हिंदू धर्म में आदर्शों का ऐसा स्वरूप क्यों रहा। अगर ये ऐतिहासिक थे तो हमने चारित्रिक विसंगतियों वाले आदर्श क्यों चुने? और अगर पौराणिक थे तो ऐसे विकृत चरित्रों की कल्पना क्यों की और उनको समाज पर क्यों थोपा? ऐसे आदर्शों का समाज पर क्या प्रभाव पड़ सकता था यह कहने की आवश्यकता नहीं।

ये ही चारित्रिक विसंगतियां हमें विरासत में ज्यों की त्यों मिलीं। जब तक हम आध्यात्मिक व धार्मिक उपलब्धि में रहे तब तक हम आचरण से हीन रहे और जब हमने संकुचित ढंग से अपना आचरण संभाला तो थोथे आचरण में ही रह गए और ज्ञान को भुला बैठे। यही कारण है कि हमारे व्यक्तित्व का स्वस्थ स्वरूप बन नहीं पाया। कहीं न कहीं विकृति अवश्य रही। महान समझे जाने वाले ज्ञानी, विश्वविद्यालय के प्रोफेसर, नेता, समाज सुधारक व शासक सभी में कम अधिक ऐसी चारित्रिक विसंगतियां इस देश में मिल जाएंगी जो अन्य देशों में उस अनुपात में नहीं मिल सकतीं।

और सबसे उपहास्यास्पद बात तो यह रही कि अगर हम अपने आदर्शों के जीवन का अनुसरण करने लगें तो यही समाज हमारे पीछे लट्‌ठ लेकर पड़ जाएगा। अगर हम श्री कृष्ण की तरह पराई विवाहित स्त्रियों से प्रेम बढ़ाने लग जाएं, राम की तरह लोकापवाद के भय से स्त्री को जंगल में छोड़ आएं, युधिष्ठिर की तरह जुआ खेलने व मतलब के वक्त झूठ बोलने लग जाएं और अपनी पत्नी को जुए पर दांव में लगा दें या हमारी स्त्रियां कुंती व द्रौपदी की तरह कई पति रखने लगें तो समाज हमें धिक्कारने लगेगा।

इसी प्रकार जब धर्म की स्थापना करने के उद्देश्य से आए राम और कृष्ण अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए हर प्रकार के अनैतिक कार्य करते हैं–जैसे छिप कर बालि का वध या महाभारत में कौरवों के नेताओं की छलकपट से हत्या तो उसका हमारे दैनिक व्यवहार में क्या असर पड़ता है? क्या इससे हमें जिस तरह भी हो, सही या गलत अपना लाभ प्राप्त करने की प्रेरणा नहीं मिलती? क्या राम ने देशद्रोही विभीषण की सृष्टि नहीं की? क्या कृष्ण की कूटनीति से प्रेरित आज हर व्यक्ति अपने बंधुबांधवों के विरूद्ध हर प्रकार का धोखा, छल व कपट करने के लिए तैयार नहीं है।

कहा यह जाता है कि इन आदर्शों से हमें अच्छी–अच्छी बातें ही ग्रहण करनी हैं, बुरी नहीं। पर मुश्किल तो यह है कि उनकी अच्छी बातें जो कुछ भी हैं वे सब शास्त्रों की सामग्री हैं जिस से साधारण जनसमुदाय परिचित नहीं। वह तो जो कुछ सीखता है आचरण से सीखता है। और अगर अच्छी बातें ग्रहण करने व बुरी बातें छोड़ने की क्षमता समाज में है तो फिर सिनेमा देखना ही क्या बुरा है? उसमें खराब बातों के साथ–साथ कुछ न कुछ अच्छी बातें भी होती हैं।

पर हम हैं कि इस ओर ध्यान नहीं देते। पीढ़ी दर पीढ़ी हमारी संतानें ये घिसेपिटे आदर्श पढ़ती आ रही हैं और वैसे ही अबौद्धिक तथा असामाजिक संस्कार अपने में विकसित करती आ रहीं हैं।

अतः समय आ गया है कि हम इस 20वीं सदी के लोकतांत्रिक समाज की आवश्यकताओं के अनुकूल आदर्शों का चयन करें और आने वाली पीढ़ी को यह ही पढ़ाएं। जब तक हम सही आदर्श समाज में स्थापित नहीं करेंगे, तब तक हमारे प्रयासों से हमें सफलता नहीं मिलेगी।

साभार :
कितने खरे हमारे आदर्श
पृ.सं. 16 से 19 तक।
सं. राकेश नाथ

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और 🔔 दबायें।

धर्मचक्र प्रवर्तन अष्टांगिक –मार्ग या सम्यक्मार्ग

सेवा में,

नाम .....

पता .....

.....

.....

1. इसके आगे बुद्ध ने उन परिब्राजकों को अष्टांगिक मार्ग का उपदेश दिया। बुद्ध ने कहा – इस मार्ग के आठ अंग हैं।

2. बुद्ध ने सर्वप्रथम सम्मा दिट्ठी (=सम्यक् दृष्टि) की व्याख्या की जो अष्टांगिक मार्ग में प्रथम है और प्रधान है।

3. सम्यक् दृष्टि का महत्व समझाने के लिये बुद्ध ने परिब्राजकों से कहा :–

4. 'हे परिब्राजको! तुम्हे इस का बोध होना चाहिये कि यह संसार एक कारागार है और आदमी इस कारागार में एक कैदी है।

5. इस कारागार में इतना अधिक अन्धकार है कि यहां कुछ भी दिखाई नहीं देता। कैदी को यह तक दिखाई नहीं देता कि वह कैदी है।

6. इतना ही नहीं कि बहुत अधिक समय तक इस अन्धेरी कोठरी में ही पड़े रहने के कारण आदमी एकदम अन्धा हो गया हो, बल्कि उसे इस बात में भी बड़ा सन्देह हो गया है कि प्रकाश नाम की कोई चीज भी कभी कहीं हो सकती है।

7. मन ही एक ऐसा साधन है, जिसके माध्यम से आदमी को प्रकाश की प्राप्ति हो सकती है।

8. लेकिन इन कारागार–वासियों के दिमाग की भी अवस्था ऐसी नहीं है कि यह उद्देश्य पूरा हो सके।

9. इनका दिमाग जरासा प्रकाश मात्र आने देता है, इतना ही है कि जिनके पास आँख है वह यह देख सकें कि अन्धकार नाम की भी कोई वस्तु है।

10. इसलिये ऐसी समझ बड़ी सदोष है।

11. लेकिन हे परिब्राजको! कैदी की स्थिति ऐसी निराशाजनक नहीं है जैसी यह प्रतीत होती है।

12. क्योंकि आदमी में एक बल है, एक शक्ति है जिसे संकल्प–बल या इच्छा–शक्ति कहा जाता है। जब आदमी के सम्मुख कोई उपयुक्त आदर्श उपस्थित होता है तो इस इच्छा–शक्ति को जाग्रत और क्रिया–शील बनाया जा सकता है।

13. आदमी को यदि कहीं से इतना भी प्रकाश मिल जाये कि वह यह देख सके कि उसे अपनी इच्छा–शक्ति को किस दिशा में अग्रसर करना चाहिये, तो आदमी अपनी इच्छा–शक्ति का ऐसा संचालन कर सकता है कि वह अन्त में उसे बन्धन–मुक्त कर दे।

14. इसलिये यद्यपि आदमी बन्धन में है तो भी वह स्वतन्त्र हो सकता है; वह किसी भी समय ऐसा पहला कदम उठा सकता है कि एक न एक दिन व स्वतन्त्र होकर रहे।

15. यह इसलिये कि हम जिस किसी दिशा में भी अपने मन को ले जाना चाहे, हम उसे उस दिशा में ले जा सकते हैं। मन ही है जो हमें जीवन–रूपी कारागार का कैदी बनाता है और यह मन ही है जो हमें कैदी बनाये रखता है।

16. लेकिन मन ने ही जिसे बनाया है, मन ही उसे नष्ट भी कर सकता है, मन अपनी कृति को मटियामेट भी कर सकता है। यदि इसने आदमी को बंधन में बांधा है तो ठीक दिशा में अग्रसर होने पर यही आदमी को बंधन–मुक्त कर सकता है।

17. यह है जो सम्यक् दृष्टि कर सकती है।

18. तब परिब्राजकों ने प्रश्न किया ''सम्यक् दृष्टि का अन्तिम उद्देश्य क्या है?'' बुद्ध ने उत्तर दिया– ''अविद्या का विनाश ही सम्यक्–दृष्टि का उद्देश्य है। यह मिथ्या–दृष्टि की विरोधिनी है।

19. ''और अविद्या का अर्थ है कि आदमी दुःख को न जान सके, आदमी दुःख के निरोध के उपाय को न जान सके, आदमी इन आर्य–सत्यों को न जान सके।

20. सम्यक् दृष्टि का मतलब है कि आदमी कर्म–काण्ड के क्रिया–कलाप को व्यर्थ समझे, आदमी शास्त्रों की पवित्रता की मिथ्या–धारण से मुक्त हो।

21. सम्यक् दृष्टि का मतलब है कि आदमी मिथ्या–विश्वास से मुक्त हो, आदमी यह न समझता रहे कि कोई भी बात प्रकृति के नियमों के विरूद्ध घट सकती है।

22. सम्यक् दृष्टि का मतलब है कि आदमी ऐसी सब मिथ्या–धारणाओं से मुक्त हो जो आदमी के मन की कल्पना–मात्र हैं और जिनका आदमी के अनुभव या यथार्थता से किसी प्रकार का सम्बन्ध नहीं।

23. सम्यक्–दृष्टि का मतलब है कि आदमी का मन स्वतन्त्र हो, आदमी के विचार स्वतन्त्र हों।

24. हर आदमी की कुछ आशायें होती हैं, आकांक्षायें होती हैं, महत्वाकांक्षायें होती हैं। सम्यक् संकल्प का मतलब है कि हमारी आशायें, हमारी आकांक्षायें ऊंचे स्तर की हों, निम्नस्तर की न हों, हमारे योग्य हों, अयोग्य न हों।

25. सम्यक्वाणी का मतलब है कि आदमी (1) सत्य ही बोले, (2) आदमी असत्य न बोले, (3) आदमी दूसरों की बुराई न करता फिरे, (4) आदमी दूसरों के बारे में झूठी बातें न फैलाता फिरे, (5) आदमी किसी के प्रति गाली–गलौज का वा कठोर वचनों का व्यवहार न करें, (6) आदमी सभी के साथ विनम्र वाणी का व्यवहार करे, (7) आदमी व्यर्थ की, बेमतलब मूर्खतापूर्ण बातें न करता रहे, बल्कि उसकी वाणी बुद्धिसंगत हो, सार्थक हो और सोद्देश्य हो।

26. जैसा मैंने समझाया सम्यक्–वाणी का व्यवहार न किसी के भय की अपेक्षा रखता है, और न किसी के पक्षपात की। इसका इससे कुछ भी सम्बन्ध नही होना चाहिये कि कोई ''बड़ा आदमी'' उसके बारे में क्या सोचने लगेगा अथवा सम्यक्वाणी के व्यवहार से उसकी क्या हानि हो सकती है।

27. सम्यक्वाणी का माप–दण्ड न किसी ''ऊपर के आदमी'' की आज्ञा है, और न किसी व्यक्ति को हो सकनेवाला व्यक्तिगत लाभ।

28. सम्यक्–कर्मान्त योग्य व्यवहार की शिक्षा देता है। हमारा हर कार्य ऐसा हो जिसके करते समय हम दूसरों की भावनाओं और अधिकारों का ख्याल रखें।

29. सम्यक्–कर्मान्त का माप–दण्ड क्या है? सम्यक् कर्मान्त का माप–दण्ड यही है कि हमारा कार्य जीवन के जो मुख्य नियम हैं उनसे अधिक से अधिक समन्वय रखता हो।

30. जब किसी आदमी के कार्य इन नियमों से समन्वय रखते हों, तो उन्हें हम सम्यक्–कर्म कह सकते हैं।

31. प्रत्येक व्यक्ति को अपनी जीविका कमानी ही होती है। लेकिन जीविका कमाने के ढंगों में अन्तर हैं। कुछ बुरे हैं, कुछ भले हैं। बुरे ढंग वे हैं जिनसे किसी की हानि होती है अथवा किसी के प्रति अन्याय होता है। अच्छे ढंग वे हैं जिनसे आदमी बिना किसी को हानि पहुंचाये अथवा बिना किसी के साथ अन्याय किये अपनी जीविका कमा सकता है। यही सम्यक्–आजीविका है।

32. सम्यक् व्यायाम; अविद्या को नष्ट करने के प्रयास की प्रथम सीढ़ी है, इस दुःखद कारागार के द्वार तक पहुंचने का रास्ता ताकि उसे खोला जा सके।

33. सम्यक्–व्यायाम के चार उद्देश्य हैं।

34. एक है अष्टांगिक–मार्ग विरोधी चित्त–प्रवृत्तियों की उत्पत्ति को रोकना।

35. दूसरा है ऐसी चित्त–प्रवृत्तियों को दबाना जो उत्पन्न हो गई हों।

36. तीसरा है ऐसी चित्त–प्रवृत्तियों को उत्पन्न करना जो अष्टांगिक मार्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति की सहायक हों।

37. चौथा है ऐसी उत्पन्न चित्त–प्रवृत्तियों में और भी अधिक वृद्धि करना तथा उनका विकास करना।

38. सम्यक् स्मृति का मतलब है हर बात पर ध्यान दे सकता। यह मन की सतत् जागरूकता है। मन में जो अकुशल विचार उठते हैं, उनकी चौकीदारी करना सम्यक्स्मृति का ही एक दूसरा नाम है।

39. ''हे परिब्राजको! जो आदमी सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाणी, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीविका, सम्यक–व्यायाम और सम्यक् स्मृति को प्राप्त करना चाहता है, उसके मार्ग में पांच बाधाएँ या बन्धन आते हैं।''

40. ये है लोभ, द्वेष, आलस्य, विचिकित्सा तथा अनिश्चय इन बांधाओं को जो वास्तव में कड़े बंधन ही हैं जीत लेना या तोड़ना आवश्यक है। इन बंधनों से मुक्त होने का उपाय समाधि है। लेकिन परिब्राजको! यह समझ लेना चाहिये कि समाधि और 'सम्यक् समाधि' एक ही बात नहीं। दोनों में बड़ा अन्तर है।

41. समाधि का मतलब है केवल चित्त की एकाग्रता। इसमें सन्देह नहीं कि इससे वैसे ध्यानों को प्राप्त किया जा सकता है कि जिनके रहते ये पांचों संयोजन या बन्ध स्थगित रहते है।

42. लेकिन ध्यान की ये अवस्थायें अस्थायी हैं। इसलिये संयोजन या बंधन भी अस्थायी तौर पर ही स्थगित रहते हैं। आवश्यकता है चित्त में स्थायी परिवर्तन लाने की। इस प्रकार का स्थायी–परिवर्तन सम्यक् समाधि के द्वारा ही लाया जा सकता है।

43. खाली समाधि एक नकारात्मक स्थिति है, क्योंकि यह इतना ही तो करती है कि संयोजनों को अस्थायी तौर पर स्थगित रखे। इसमें मन का स्थायी परिवर्तन निहित नहीं है। सम्यक् समाधि एक भावात्मक वस्तु है। यह मन को कुशल–कर्मों का एकाग्रता के साथ चिन्तन करने का अभ्यास डालती है, और इस प्रकार मन की संयोजनोत्पन्न अकुशल–कर्मों की ओर आकर्षित होने की प्रवृत्ति को ही समाप्त कर देती है।

44. सम्यक् समाधि मन को कुशल और हमेशा कुशल की कुशल (भलाई ही भलाई) सोचने की आदत डाल देती है। सम्यक् समाधि मन को वह अपेक्षित शक्ति देती है, जिससे आदमी कल्याणरत रह सके।

साभार – भगवान बुद्ध और उनका धर्म
पृष्ठ सं. 97 से 100
डॉ. भदन्त आनन्द कौसल्यायन

Youtube पर Dravid Bharat Channel को Subcribe करें और दबायें।